ज्योतिपुंज विवेकानंद

देवाशीष घोष

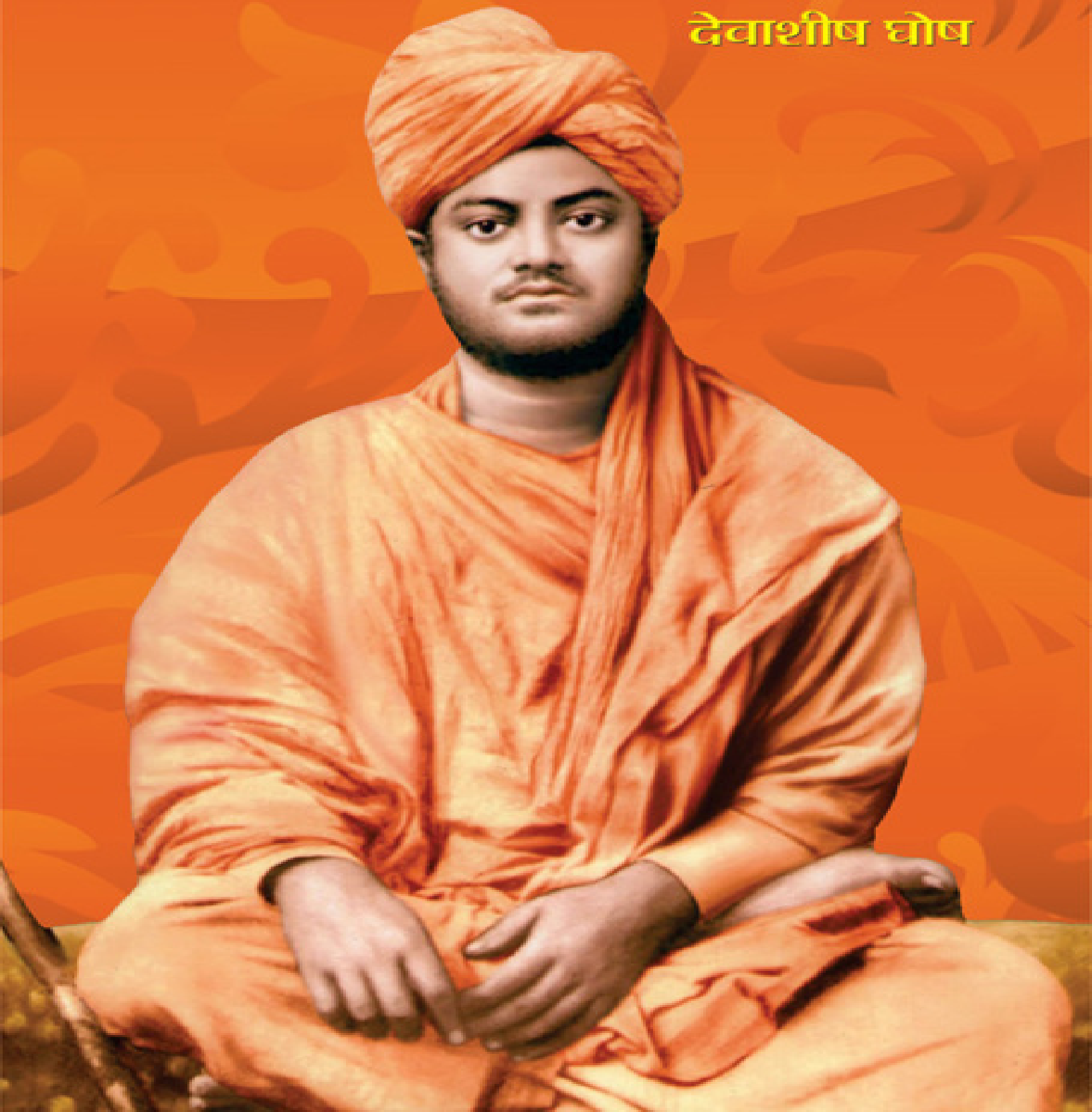

ज्योतिपुंज विवेकानंद

देवाशीष घोष

अनुवाद
सुशील गुप्ता

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001:2008 प्रकाशक

अनुक्रम

आज 6 जनवरी, 1898

11 मार्च, 1898

25 मार्च, 1898

28 मार्च, 1898, सोमवार

3 मई, 1898

6 जून, 1898. सोमवार

11 जून, 1898

12 जून, 1898

4 जुलाई, 1898

17 सितंबर, 1898

12 अक्तूबर, 1898

अक्तूबर 1898, दुर्गाष्टमी

13 नवंबर, 1898

1 दिसंबर, 1898

9 दिसंबर, 1898

जनवरी 1899 के आखिरी दिनों में एक दिन।

28 मार्च, 1898

मई 1899 का कोई एक दिन

28 मई, 1899

20 जून, 1899

28 जून, 1899

14 जुलाई, 1899

3 अगस्त, 1899

21 सितंबर, 1899

5 नवंबर, 1899

15 फरवरी, 1900

20 अप्रैल, 1900

सितंबर का कोई एक दिन: 1900

26 दिसंबर, 1900

6 जनवरी, 1901

29 मार्च, 1901

5 जुलाई, 1901

7 दिसंबर, 1901

21 अक्तूबर, 1901. दुर्गा नवमी

21 फरवरी, 1902

19 जून, 1902

2 जुलाई, 1902

4 जुलाई, 1902

4 जुलाई, 1902, अपराह्न

5 जुलाई, 1902

आज 6 जनवरी, 1898

हावड़ा के रामकृष्णपुर गंगा घाट पर तीन-तीन नावें आ लगीं। नाव से उतरे आश्चर्य, स्वामी विवेकानंद स्वयं। शिकागो धर्म-संसद् में असाधारण व्याख्यान देकर उन्होंने विदेश के बड़े-बड़े अंग्रेज साहब, विद्वान्-पंडितों को महा आश्चर्य में डाल दिया था। देश-विदेशों के अखबारों में पूरे पन्ने भर में, बड़े-बड़े अक्षरों में उनका नाम प्रकाशित हुआ था। कौन है यह विश्व-विजेता संन्यासी? उनके दर्शनों के लिए आज सैकड़ों-हजारों की संख्या में लोग गंगा घाट पर आ खड़े हुए हैं।

नवगोपाल घोष अपनी दोनों बाँहें उठाकर बोल उठे, "जय! रामकृष्ण की जय!"

आकाश-वाताश, गंगा-तट तत्काल रामकृष्ण के नाम से मुखरित हो उठा।

नाव से उतरते ही स्वामीजी गंगा घाट पर ही धम्म से बैठ गए।

वे मन-ही-मन बुदबुदा उठे, 'अति सुंदर हैं गंगा घाट की ये सीढ़ियाँ! घाट का नाम भी ठाकुर के नाम पर—राम-कृष्ण-पुर!'

आज पूर्णिमा है, इसीलिए घाट पर पुण्यार्थियों की भारी भीड़ है। असंख्य लोग पवित्र गंगा में स्नान कर रहे हैं। स्वामीजी ने उठकर पुण्यतोया गंगाजल माथे से लगाया। वही गंगाजल उन्होंने अपने चारों तरफ छिड़क दिया। वे दुबारा मुड़े और उन्होंने अँजुरी में जल भरकर अपने चेहरे, सिर और गरदन को भी भिगो लिया।

घाट की सीढ़ियाँ चढ़ते-चढ़ते स्वामीजी ने अपने शिष्य शरच्चंद्र से मृदंग माँग लिया। मृदंग बज उठा। साथ-साथ और भी कई-कई मृदंग झंकृत हो उठे। भक्त नवगोपाल घोष ने भी मृदंग पर बोल छेड़ दिया। स्वामीजी से उनकी आँखें मिलते ही दोनों हौले-हौले मुसकरा उठे। आँखों-ही-आँखों की भाषा में एक-दूसरे से जाने क्या तो बातें हुईं।

अगले ही पल स्वामीजी ने भरपूर आवाज में गीत छेड़ दिया—

"दुखिया बाम्हनी गोद में लेटा, किए उजाला हीरक-कनी

कौन है ओ रे दिगंबर, आया मोरे घर-आँगन में,

भूतल पर अतुल मणि, कौन आया तू जादू-मणि

तापित हेरे अवनी, पार कराने आया तू वैतरणी।"

यह गीत गिरीशचंद्र घोष का लिखा हुआ है। गिरीश घोष ने यह गीत ठाकुर श्रीरामकृष्ण को संबोधित करके लिखा था। सहाना राग में, झाँप ताल में।

स्वामीजी का परिधान गेरुआ वस्त्र है। सिर पर गेरुआ पगड़ी, खाली पाँव। मृदंग और गान के ताल-ताल पर स्वामीजी नाचने लगे। आज मानो स्वामीजी परम आनंद में बेसुध हो गए हैं।

वह मंडली रामलाल डॉक्टर के घर के सामने आकर ठिठक गई। डॉ. रामलाल घोष नवगोपाल बाबू के मित्र हैं। भजन सुनकर डॉक्टर बाबू अत्यंत आकुल-व्याकुल होकर घर से बाहर निकल आए। मंडली आगे बढ़ चली। डॉक्टर भी उस मंडली के साथ चल पड़े।

स्वामीजी को देखने आए हुए उत्साही लोगों की भीड़ जमा हो गई है।

उस भीड़ में मौजूद बहुतेरे लोग आपस में कह रहे हैं, "यह किनको देख रहा हूँ जी? यह तो साक्षात् गौरांग महाप्रभु हैं।"

असंख्य लोगों की बातचीत में भी स्वामीजी को किंचित् होश नहीं है। उनके गोरे-गोरे अंग पर रास्ते की धूल लिपटी हुई है। वे गोलाकार घूम-घूमकर नाच रहे हैं और गा रहे हैं—

"व्यथित को क्या देने दर्शन

आए गोपन में एकाकी,

मुख पर करु णा लपेटे

तुम हँसते-रोते किसके लिए?"

उनकी अगल-बगल के भक्त रामकृष्ण का नाम-संकीर्तन करने लगे। आज स्वामीजी को मानो ठाकुर के भाव ने बेसुध कर दिया है। उनकी आँखों से लगातार झर-झर आनंदाश्रु झरते रहे। उनकी आँखों के आँसू गालों से बहते हुए उनके गेरुए वस्त्र भिगोते रहे। होंठ हौले-हौले काँपते हुए! होंठों की कोरों में स्वर्गीय हँसी की रेखा।

मरि-मरि रूप हेसूँ

अँखियाँ फेर न पाऊँ रे,

हृदय - संताप - हारी

साध जागे हिय में रे।

भजन-मंडली नवगोपाल घोष के घर की ओर चल पड़ी। घाट से एक सड़क जी.टी. रोड से जा मिली है। वहाँ से एक सड़क पश्चिम की तरफ समानांतर चली गई है। उस सड़क का नाम है—रामकृष्णपुर लेन। उस सड़क से कुछ दूर आगे बढ़ते ही बड़ा सा मैदान और मसजिद।

उस मैदान के बगल में ही नवगोपाल घोष का घर। घर का ठिकाना है 81 नंबर, रामकृष्णपुर लेन। नवगोपाल घोष ने वह घर किसी मुसलमान सज्जन से खरीदा था और उसमें और कई कमरे जोड़कर उन्होंने दो-मंजिला मकान बनवा लिया था। कलकत्ता का बादुड़ बागानवाला घर छोड़कर वे अपने परिवार के साथ अब स्थायी तौर पर रामकृष्णपुर में ही रहने लगे हैं।

मकान का प्रवेश-द्वार पूर्व की तरफ है। मकान उत्तर-दक्षिण-पश्चिम में तीन महला है। प्रवेश-द्वार के बगल में दक्खिन महल में नीचे की मंजिल में बड़ा सा बैठक खाना है। मकान की दूसरी मंजिल पर पूजा-घर। वह कमरा संगमरमर से निर्मित है।

आज माघी पूर्णिमा है। मकान के सामनेवाले फाटक को गेंदे के फूल और आम के पत्तों से सजाया गया है। फाटक के दोनों तरफ केले के पौधे और मंगल-कलश रखे गए हैं। कलश पर दो डाब सजे हैं। नवगोपाल घोष का दूसरा बेटा नीरदवरण अतिशय प्रभु-भक्त है। बचपन से ही उसे गाना और तसवीरें आँकना बेहद प्रिय है। उस दिन घर सजाने का जिम्मा उसी को सौंपा गया है। आज समूचे मकान में उत्सव का माहौल है। श्रीरामकृष्ण के गृही भक्त नवगोपाल घोष और उनकी पत्नी निस्तारिणी देवी की एकांत इच्छा थी कि उनके घर में ठाकुर के विग्रह की प्रतिष्ठा हो। इसलिए वराहनगर के आलम बाजार के मठ से स्वामी विवेकानंद ठाकुर के श्रीविग्रह की प्रतिष्ठा करने आए हैं।

स्वामीजी को मकान के बैठकखाना में लाकर बिठाया गया।

पिछले वर्ष के जून महीने में आए भूकंप में आलम बाजार का जीर्ण मठ-निवास इतना क्षतिग्रस्त हो चुका था कि वहाँ रहना ही जोखिम भरा था। इसलिए नए मठ के लिए काफी जोर-शोर से जमीन की खोज हो रही थी। दो दिनों पहले ही बेलूर में नीलांबर मुखर्जी की बागान-कोठी के करीब ही मनचाही जमीन मिल गई। जमीन की देखरेख करने और नए मठ घर के निर्माण कार्य की देखरेख के लिए अगले सप्ताह, आलम बाजार से मठ के सभी

लोग-बाग, नीलांबर बाबू के किराए के मकान में आने वाले हैं। बैठक में बैठे-बैठे, बातचीत के दौरान, स्वामीजी ने यह सब जानकारी भी दी।

ठाकुर घर से खबर आई कि पूजा का समस्त आयोजन पूरा हो चुका है। नवगोपाल बाबू राह दिखाते हुए स्वामीजी को दूसरी मंजिल पर ले आए।

ठाकुर घर में संगमरमर के सिंहासन पर श्रीरामकृष्ण की पोर्सिलिन की मूर्ति आसीन है। ठाकुर के जीवनकाल में उनकी तीन तसवीरें उतारी गई थीं। उन तसवीरों को ब्रोमाइड और गैसलाइट पेपर पर प्रिंट किया गया था। पानी पड़ते ही तसवीरों का प्रिंट नष्ट हो जाने की संभावना होती है, इसलिए तसवीरें अत्यंत सावधानी से रखनी पड़ती हैं। इसलिए स्वामीजी यूरोप से पाँच तसवीरों का प्रिंट करा लाए थे। असली तसवीर की प्रतिच्छवि पोर्सिलिन की प्लेट पर फोटो के सादृश्य मुद्रित है।

ठाकुर श्रीरामकृष्ण का नाम-स्मरण करते हुए पूजा-पाठ शुरू हुआ। स्वामी प्रकाशानंद ने मंत्र-पाठ किया। स्वामीजी ध्यानस्थ। बीच-बीच में उनका तन-बदन भावावेग से काँप उठता था। उनके होंठ तिर-तिर करके काँपते हुए! अचानक ही अंतस की गहराइयों से स्वामीजी की आवाज में अपूर्व मोहक प्रणति-मंत्र गूँज उठा—

"ॐ स्थापकाय चः धर्मस्य सर्वधर्मस्वरूपिणे

अवतारवरिष्ठाय रामकृष्णाय ते नमः"

काँसे का घंटा ध्वनित होता रहा।

सभी लोग समवेत स्वर में बोल उठे, "जय! रामकृष्ण की जय!"

पूजा शेष हुई। प्रसाद वितरण शुरू हो गया। दूसरी मंजिल के कमरे में निस्तारिणी देवी अपने हाथों से परोसकर स्वामीजी को खिला रही थीं। स्वामीजी ने स्वयं भी एक टुकड़ा बैंगन-भाजा माँगा। निस्तारिणी देवी ने बैंगन-भाजा के साथ-साथ कई एक पूडियाँ भी स्वामीजी की पत्तल में परोस दीं।

एक कलछुल बंदगोभी आलू की सब्जी परोसते ही स्वामीजी ने हँसकर कहा, "भाभीजी, बहुत ज्यादा खा लिया। सारा आयोजन बहुत अच्छा है। लगता है, इस घर में ठाकुर मजे में रहेंगे।"

उन्हें पंखा झलते हुए निस्तारिणी देवी ने भी हँसकर जवाब दिया, "हमारी क्या क्षमता कि ठाकुर का सेवाधिकार लाभ करूँ? मामूली सा घर, मामूली सी आर्थिक..."

मुँह में एक जलेबी भरकर स्वामीजी ने जोर का ठहाका लगाया। उनकी हँसी मानो थमना ही नहीं चाहती थी।

बगल में बैठे उनके शिष्य शरच्चंद्र पूछ बैठे, "ऐसी क्या बात हो गई कि आप यूँ हँस रहे हैं?"

खूब स्वाद ले-लेकर जलेबी खाते-खाते स्वामीजी ने स्वगत ही कहा, "ओ रे, हँसूँगा नहीं? ठाकुर तो पिछले चौदह जनम में भी ऐसे मार्बल-जड़े कमरे में नहीं रहे। वज्र गाँव-देहात के फूस के घर में जन्म हुआ, येन-केन-प्रकारेण दिन गुजारा। यहाँ ऐसे सेवा-जतन में अगर न रहे तो और कहाँ रहेंगे?"

स्वामीजी की यह बात सुनकर अब सभी लोगों ने हँसना शुरू कर दिया।

खाना-पीना निपटाकर स्वामीजी ने हाथ-मुँह धोया और दूसरी मंजिल के ही दक्षिणी तरफ के एक कमरे में आ बैठे। कुछ ही देर बाद उन्हें विदा लेना था।

निस्तारिणी देवी ने आकर स्वामीजी को प्रणाम किया।

स्वामीजी मंद-मंद मुसकराते रहे।

अचानक वे उठ खड़े हुए और अगले ही पल अपने माथे की पगड़ी खोल डाली।

स्वामीजी ने अपने दोनों हाथ बढ़ाकर अपने माथे की पगड़ी निस्तारिणी देवी के हाथ पर रख दी। वह पगड़ी ठाकुर की परम सेविका को उनका प्रीति-उपहार था।

निस्तारिणी देवी की आँखों में आनंद के आँसू झिलमिला उठे।

नवगोपाल बाबू ने आकर सूचना दी कि घाट पर नाव तैयार है। सीढ़ियों से नीचे उतरकर स्वामीजी ने देखा कि एक घोड़ागाड़ी उनकी प्रतीक्षा कर रही है। घाट तक पहुँचने की राह भी अब उन्हें पैदल तय नहीं करनी होगी। नवगोपाल बाबू ने सभी तरह का इंतजाम कर रखा है। स्वामीजी अपने शिष्य शरच्चंद्र के साथ वहाँ से बाग बाजार जा रहे हैं।

घाट पर पहुँचकर स्वामीजी ने देखा कि उन्हें विदा देने के लिए नवगोपाल बाबू के घर के बहुत से लोग वहाँ पहले से ही आकर खड़े थे।

पश्चिम में अस्तगामी सूर्य की किरणें गंगा पर पड़ रही थीं। स्वामीजी नाव पर सवार हो गए। आज उनका मन-प्राण ठाकुर के भाव में आप्लावित है। अस्तगामी रक्तिम सूरज को देखकर स्वामीजी को ठाकुर का स्मरण हो आया। श्रीरामकृष्ण उनके लिए सूर्य जैसे थे। अब वे इहलोक में नहीं हैं, फिर भी वे स्वामीजी की भावना, मनन, चिंतन को हर पल घेरे हुए हैं।

अस्तगामी सूर्य पर नजरें गड़ाए स्वामीजी मन-ही-मन वंदना करने लगे—तुम सत्य, अचल, त्रिगुणजई, दिव्य गुणों द्वारा वंदनीय हो। सत्पथ-स्वरूप, रामकृष्ण, तुम ही मेरे परम आश्रय हो।

साँझ उतर आई है।

नाव बाग बाजार की ओर आगे बढ़ती रही। गंगा का वक्ष अद्भुत अँधेरे-उजाले में घुला-मिला जा रहा हो। गंगा-तट के किसी एक देव मंदिर से शंख-काँसे के घंटे बज उठे। संध्या आरती शुरू हो गई थी।

स्वामीजी गुनगुनाते हुए एकदम से गा उठे—

"ॐ स्थापकाय च धर्मस्य सर्वधर्मस्वरूपिणे

अवतारवरिष्ठाय रामकृष्णाय ते नमः।"

11 मार्च, 1898

सुबोध महाराज को देखते ही स्वामी प्रेमानंद बोल उठे, "खोका, तेरे व्याख्यान में कितना दम होता है। तेरे तो खड़े होते ही ससागरा पृथ्वी थरथरा उठती है।"

उनकी बात सुनकर सुबोध महाराज हँस पड़े।

पिछले वर्ष 12 जून को एक भयंकर भूकंप में आलम बाजार का मठ-बिहार बेतरह क्षतिग्रस्त हो गया था। सामने के मकान का ऊपरी एक हिस्सा पूरी तरह टूटकर गिर पड़ा था। वैसे उस भूकंप में कलकत्ता शहर के सभी घर-मकान कमोबेश क्षतिग्रस्त हुए थे।

भूकंप रविवार को आया था। उस दिन आलम बाजार मठ के पाठ-चक्र में प्रधान वक्ता स्वामी सुबोधानंदजी महाराज ने जैसे ही अपना व्याख्यान शुरू किया, धरती भूकंप से काँप उठी थी।

इसीलिए प्रेमानंद महाराज सुबोध महाराज से अकसर यह मजाक कर बैठते थे।

बेलूर में नए मठ के लिए जमीन खरीदी जा चुकी है। बहुत जल्दी ही मठ का काम शुरू होने वाला है। इसलिए मठवासियों के मन में खुशी का ज्वार उमड़ा पड़ रहा है! नई जमीन की दखल लेने के लिए और मठ-निर्माण कार्य शुरू करने के लिए पिछले महीने की 13 फरवरी को मठ आलम बाजार से हटाकर 48 नंबर लाला बाबू सायर रोड में स्थित नीलांबर मुखर्जी की बागान कोठी में लाया गया है। वह बागान कोठी कुछेक महीनों के लिए किराए पर ली गई है।

किसी समय माँ शारदा के रहने के लिए नीलांबर मुखर्जी की यह उद्यान कोठी किराए पर ली गई थी। इसी मकान में रहते हुए शारदा माँ ने पंचतपा व्रत किया था। इसके अलावा अलग-अलग समय में माँ को बेलूर में राजू गुमाश्ता के घर और घुसुड़ी श्मशान के करीब किसी किराए के मकान में भी लाकर रखा गया था। ये दोनों ही घर गंगा तट पर ही थे।

बेलूर की जमीन का अता-पता पिछले वर्ष के जुलाई महीने के शुरू में मिला था। स्वामीजी उन दिनों मठ की प्रतिष्ठा के लिए जमीन की तलाश में बेतरह परेशान थे। लेकिन मठ के कार्यकर्ताओं के हाथ में जरूरी रकम नहीं थी।

पिछले वर्ष जुलाई में स्वामीजी ने अल्मोड़ा से स्वामी ब्रह्मानंद को खत लिखा था —"काशीपुर में केष्टोगोपाल का बागान खरीद लिया जाए तो अच्छा नहीं होगा?... अगर पंद्रह-सोलह हजार के अंदर सौदा तय हो जाए तो क्या तत्काल खरीद लोगे?"

उन्होंने लिफाफे के ऊपर लिखा था—"काशीपुर में खासतौर पर कोशिश कर देखो।...बेलूर की जमीन का खयाल छोड़ दो।"

पिछले वर्ष लगभग सितंबर महीने में जोगेन महाराज यह जानकारी लेकर आए थे कि बाग बाजार की हरिवल्लभ वाटिका 20 हजार रुपयों में बिक रही है। स्वामीजी की इसमें खास सहमति नहीं थी। इसकी वजह यह थी कि वह वाटिका खरीदी जाती तो बहुत-बहुत झमेला था। वाटिका के बैठकखाने को तोड़-फोड़कर उसे बड़े हॉल में बदलना और अन्य बंदोबस्त करना वगैरह-वगैरह। इसके अलावा वह घर बेहद पुराना-धुराना और जर्जर हालत में था। इसलिए वह वाटिका खरीदने की बात ज्यादा दूर तक आगे नहीं बढ़ी।

पानिहाटी में गोविंदा चौधरी की बागान कोठी भी देखी गई। कामारहाटी में एक बागान कोठी और कोन्नगर में जमीन की भी खबर मिली थी। कामारहाटी की बागान कोठी चूँकि काफी दूर थी, इसलिए यह प्रस्ताव रद्द कर दिया गया। आलम बाजार मठ के साधु लोग सितंबर के महीने में जमीन देखने गए थे। दक्षिणेश्वर में भी जमीन खरीदने की कोशिश की जा रही थी, लेकिन त्रैलोक्यनाथ नीवश्वास ने जो शर्तें रखी थीं, मठ के कार्यकर्ताओं के लिए

वे स्वीकार योग्य नहीं थीं। उन्हीं दिनों बेलूर में भी जमीन देखी जा रही थी। आखिरकार बेलूर की जमीन खरीदने का फैसला किया गया।

पिछले महीने की 4 तारीख को पटना-निवासी भगवत नारायण सिंह से बेलूर में स्थित छोटे-छोटे दो घर समेत 22 बीघा जमीन खरीद ली गई। उसके अगले ही दिन 1,000 रुपए देकर जमीन का बयाना भी हो गया। जमीन खरीदने के लिए रुपए दिए थे किस हेनरियेटा मूलर ने। 39 हजार रुपयों में मठ की वह जमीन खरीदी गई। पिछले महीने की 25 तारीख को जमीन की दखल मिली।

उस जमीन के एक हिस्से में जावों की मरम्मत का काम होता था। जमीन की पूर्वी सीमा गंगा के समानांतर है। उस भूखंड के उत्तर-पूर्व में एक मेझोल और एक छोटे आकार का एकमंजिला घर भी स्थित है। आस-पास कई पेड़ खड़े हैं। उन पेड़ों में आम का एक पुराना पेड़ भी है। आम का वह छायादार पेड़ स्वामीजी को बेहद पसंद है। इस भूखंड के दक्षिण में देवदार के तीन-तीन विशाल पेड़ हैं।

किस्म-किस्म के पेड़, झोंय-झाड़ के जंगल, पोखर, पानी से भरे छोटे गड्ढे, खाना-खंदकों से घिरी जो जमीन खरीदी गई है, उसका ठिकाना है—5 नंबर, काठगोला लेन।

डोरी बैरकपुर मौजा और बारह परगना के अंतर्गत बेलूर गाँव में मठ के इस आदि भूखंड के उत्तर में थोड़े से हिस्से में हाराधान दत्त की बागान कोठी और जमीन स्थित है। बाकी हिस्से में शंभु पाल की जमीन है। दक्षिणी सीमा के हिस्से में कुमार श्रीशचंद्र सिंह की जमीन है, बाकी हिस्से में भगवत नारायण सिंह की जमीन। पश्चिमी सीमा के एक हिस्से में भगवत नारायण की जमीन का ही एक हिस्सा है। बाकी हिस्से में आम लोगों के चलने के लिए सड़क और गुलाम, अशरफ, महेंद्रलाल दास एवं वेणीमाधव की जमीन। आस-पास मौजूद हैं—काठ के गोले, ईंट के भट्ठे, बागान कोठी, लोहे के छोटे-मोटे कारखाने, कुछ ही दूर पर बेलूर बाजार।

मठ की जमीन के एक हिस्से में होर मिलर कंपनी के छोटे-मोटे मालवाही जहाजों की मरम्मत हुआ करती थी। नए मठ की जमीन के परिसर में गंगा के ज्वार का पानी घुस आता था। ऊबड़-खाबड़ जीमन, खाना-खंदकों से भरा हुआ!

भूखंड की उत्तर दिशा में पुराना-धुराना व जर्जर एक मंजिला पक्का घर है। उसमें उत्तर की ओर दो कमरे और दक्षिण की ओर एक कमरा मौजूद है। दोनों हिस्सों को जोड़ते हुए बीच में एक लंबा कमरा। उस मकान के उत्तर-पश्चिम की ओर और एक छोटा सा घर है।

हरिप्रसन्न चट्टोपाध्याय इंजीनियर हैं। स्वामीजी उनसे खास स्नेह करते हैं यानी वे स्वामीजी के अतिशय स्नेहभजन हैं। मठ तैयार करने का प्लान बनाने का दायित्व वे हरिप्रसन्न को सौंपने का एक तरह से फैसला कर चुके हैं। स्वामीजी ने उन्हें आड़ियादह के निवासी अनुभवी इंजीनियर रायबहादुर पी. जी. बैनर्जी से भेंट करने की हिदायत दी है। लेबर-ठेकेदार गुलाम रसूल को जिम्मेदारी दी जा सकती है या नहीं, इस बारे में भी बातचीत चल रही है। मठ-कोठी तैयार करने से पहले मिट्टी फेंककर जल्द-से-जल्द जमीन समतल करने का काम शुरू किया जाना है।

यह काम धीरे-धीरे आगे बढ़ाने के लिए और मठ-कार्य के निर्वहण का दायित्व ग्रहण करने के लिए किसी धीर-स्थिर व्यक्ति की जरूरत है। इसलिए स्वामीजी के निर्देश पर स्वामी शारदानंद अमेरिका से स्वदेश लौट आए हैं। अमेरिका में प्रचार की जिम्मेदारी सँभालने के लिए स्वामी अभेदानंद वहीं ठहर गए हैं। पिछले महीने के लगभग मध्य समय में स्वामी शारदानंद के साथ दो अमेरिकी महिलाएँ मिस मैकलाउड और मिसेज अली बुल भी भारत आई हैं। जनवरी के आखिर में आयरिश महिला मिस मारग्रेट नोबल भी भारत आ पहुँची हैं। वे सभी महिलाएँ मिस हेनरिएटा मूलर द्वारा किराए पर लिये गए मकान में ठहर गई हैं।

मिसेज ऊलू बुल ने वादा किया है कि मठ-कोठी के निर्माण के लिए रुपए देंगी। मैकलाउड लोग मिस मूलर के किराए का मकान कुछ ही दिनों में छोड़ने वाली हैं। स्वामीजी से उन लोगों की बात हो चुकी है कि के मठ-निर्माण से पहले मठ के पुराने घर का रंग-रोगन करा देंगे।

बहरहाल, जमीन खरीदारी का झमेला तो खत्म हुआ। मठ भी आलम बाजार से उठकर बेलूर के नीलांबर मुखर्जी के किराए के मकान में आ चुकाहै। वह मकान गंगा-किनारे है। बेहद खुला-खुला उन्मुक्त परिवेश! स्वामीजी उन दिनों नए मठ में ही रह रहे हैं।

वह सुबह बेहद मनोरम थी। स्वामीजी के कमरे से जुड़े आम के पेड़ से पंछियों की चहचहाहट सुनाई देती है।

स्वामीजी ने अपनी मित्र क्रिस्टिन ग्रीनस्टाइडेल को खत लिखा—'We have changed our Math from the old, nasty house on the bank of the Ganga. This is much more healty and beautiful.'

25 मार्च, 1898

मारग्रेट ने अपने हाथों से शिवलिंग पर धतूरे के फूलों की माला लपेट दी। भगवान् शिव को लाल चंदन, चर्चित कलंगीदार फूल और धतूरे के फल अर्पित किए।

स्वामीजी बगल में ही बैठे हुए हैं। वे मारग्रेट को बड़े स्नेह से शिव-उपासना की विधि समझा रहे हैं।

पूरा नाम—मारग्रेट एलिजाबेथ नोबल, पिता—सैमुअल नोबल और माँ मेरी ईजाबेल हैमिल्टन की तीन संतानों में ज्येष्ठ संतान। जन्म उत्तरी आयरलैंड के डानग्यनन शहर में।

मारग्रेट आयरलैंड के हैलिफै क्स कॉलेज से फाइनल परीक्षा पास करके उसी वर्ष केसवीक के एक स्कूल में टीचर के तौर पर शामिल हुई थीं। इसके बाद विभिन्न स्कूलों में टीचर की नौकरी की। स्वामीजी से उनकी पहली भेंट लंदन के वेस्टएंड में ईसाबेल मारग्रेट के घर हुई थी। प्रथम दर्शन में ही मारग्रेट स्वामीजी के प्रति श्रद्धा-भाव में डूब गई थीं।

पिछले वर्ष मिसेज स्टर्डी ने सूचित किया था कि मारग्रेट भारत आना चाहती हैं। उन्होंने सारा कुछ अपनी आँखों से देखने का पक्का इरादा कर लिया था।

स्वामीजी को भी दृढ़ विश्वास है कि भारत के कार्यों में मारग्रेट का एक विराट् भविष्य है। मारग्रेट के दादा रेवरेंड जॉन नोबल प्रोटेस्टेंट वेएलियम चर्च के धर्मगुरु थे। उन्होंने आयरलैंड के मुक्ति-संग्राम में भी हिस्सा लिया था।

स्वामीजी ने मारग्रेट से कहा, "तुम्हारी शिक्षा, ऐकांतिकता, पद्मिता, असीम कार, दृढ़ता और सर्वोपरि तुम्हारी नसों में प्रवाहित धर्म-प्रधान रक्त की वजह से तुम बिलकुल वैसी ही महिला हो, जिसकी आज के युग में जरूरत है।"

मारग्रेट 'मोंबासा' जहाज से मद्रास से होते हुए इस वर्ष की जनवरी की 28 तारीख को कलकत्ता आ पहुँची हैं। कलकत्ता के स्ट्रैंड रोड के जहाज-घाट पर स्वामीजी स्वयं ही उनके स्वागत के लिए उपस्थित थे!

मारग्रेट के भारत आने से पहले ही स्वामीजी ने उन्होंने जानकारी दे दी थी, "बाधाएँ बहुत सारी हैं। इस देश में दु:ख-क्लेश, कुसंस्कार, दासत्व वगैरह किस कि स्म का है, तुम अंदाजा

भी नहीं लगा सकती। इस देश में आकर तुम असंख्य स्त्री-पुरुषों में लिपटी अपने को अधनंगी महसूस करेगी। यहाँ के लोगों के मन में जाति और स्पर्श के बारे में विकट धारणाएँ हैं। भले भय से हो या घृणा से, लोग श्वेतांगों से कतराकर चलते हैं और वे लोग भी इन लोगों से बेहद नफरत हैं। अगर और नजरिए से विचार करें, तो गोरी चमड़ीवाले तुम्हें खामखयाली मानेंगे और तुम्हारी हर गतिविधि को शक की नजर से देखेंगे।

"इसके अलावा, यहाँ की जलवायु भी ग्रीष्म-प्रधान है। इस देश की प्रायः सभी जगहें बहुत जल्दी ही तुम्हें अपने यहाँ की गरमी जैसी लगने लगेंगी और यहाँ के दक्षिणांचल में तो हमेशा ही आग की चिनगारियाँ बिखरती रहती हैं।

"शहर से बाहर कहीं भी कोई यूरोपीय चेहरा सुख-स्वच्छंदता से नजर आ जाए, इसका कोई उपाय नहीं है। इन सबके बावजूद अगर तुम यहाँ काम करने की हिम्मत कर सको, तो निश्चित रूप से सौ बार तुम्हारा स्वागत करूँगा।"

पिछले महीने के अंत में मारग्रेट दक्षिणेश्वर मंदिर भी घूम आईं। स्वामीजी की इच्छा है, "मनुष्यों में अपने में निहित देवत्व की वाणी का प्रचार करना होगा और सभी कार्यों में आती देवत्व-विकास की राह निर्धारित कर देनी होगा।" वे चाहते हैं, भारत में आगत मारग्रेट अपने पैरों पर खड़ी हों।

इसी महीने की 11 तारीख को मारग्रेट ने स्टार थिएटर में आयोजित जनसभा में पहला व्याख्यान दिया। उनके व्याख्यान का विषय था Influence of spritual thoughts of India in England. यानी 'इंग्लैंड में भारत के आध्यात्मिक विचारों का प्रभाव'!

उस व्याख्यान मंच पर स्वामीजी ने उनका परिचय कराते हुए कहा, "इंग्लैंड ने हमें एक उपहार दिया है—मिस मारग्रेट नोबल!"

स्वामीजी ने उन्हें पहले ही बता दिया था, "कामकाज में कूदने से पहले अच्छी तरह सोच लो और किसी कार्य के बाद अगर विफल हो जाओ या कर्म में विरक्ति आ जाए तो मेरी तरफ से यह निश्चित जानो कि उसके बाद भी तुम मुझे अपने करीब ही पाओगी। तुम चाहे भारत के लिए काम करो या न करो, वेदांत धर्म त्याग दो या थामे रहो, मैं तुम्हारे साथ रहूँगा।"

ठाकुर घर में महात्मा बुद्ध की एक मूर्ति है। उस करुणाधन बुद्ध की मूर्ति पर नजरें गड़ाए स्वामीजी ने मारग्रेट से कहा, "अब कुछ फूल मेरे बुद्ध को अर्पित करो।"

मारग्रेट घुटनों के बल बैठ गईं और बुद्ध की मूर्ति के सामने उन्होंने मुट्ठी भर बेल फूल की अंजलि दी।

स्वामीजी की निगाहें अब तक बुद्ध की मूर्ति पर गड़ी रही।

"सकल दुःखों के मूल में है अज्ञता, इसके अलावा और कुछ नहीं। जगत् को प्रकाश आखिर कौन प्रदान करेगा? आत्म-विसर्जन ही था अतीत का कर्म-रहस्य! हाय, युग-युग तक यही सिलसिला चलता रहेगा। जो लोग जगत् में सबसे अधिक साहसी और वरेण्य हैं, उन लोगों को सदा-सर्वदा 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' आत्म-त्याग करते रहना होगा। अनंत प्रेम और करुणा से परिपूर्ण, शत-शत बुद्ध के आविर्भाव की जरूरत है।" स्वामीजी ने अपनी मानस-पुत्री से कहा, "जाओ, जिन्होंने बुद्धत्व लाभ से पहले पाँच सौ बार दूसरों के लिए जन्म ग्रहण किया और प्राण विसर्जन किया था, उन्हीं बुद्ध का अनुसरण करो।"

मारग्रेट अपने घुटने गाड़े स्वामीजी के समीप बैठी रहीं।

स्वामीजी ने कहा, "आज से तुम्हारा नाम हुआ निवेदिता!"

28 मार्च, 1898, सोमवार

नाव में जाते-जाते माँ को ढेर-ढेर पुरानी यादें घेरे रहीं। बेलूर...नीलांबर मुखर्जी की बागान-कोठी...पंचतया व्रत...और-और भी कितना कुछ।

कोई समय था, जब माँ किराए के उस नीलांबर मुखर्जी जी उद्यान वाटिका में रहा करती थीं।

सुबह 8 बजे नाव बेलूर के घाट से आ लगी। उनके साथ थे योगीन महाराज, ब्रह्मचारी कृष्णलाल, शारदा महाराज के छोटे भाई, आशुतोष मित्र और गुलाब माँ। नाव घाट पर लगते ही शंख-ध्वनि से पूरा मठ मुखर हो उठा। मठ के साधुओं ने बड़े जतन से माँ को बिठाया।

इन दिनों गरमी का मौसम है। एक जन-सेवक माँ के करीब खड़ा पंखा झलने लगा।

राजा महाराज ने आकर माँ को प्रणाम करके कहा, "माँ, अगर कोई असुविधा हुई तो आप सुशील से कहिएगा। आशुतोष भी साथ-साथ रहेगा।"

राखाल महाराज के चले जाने के बाद मठ के अन्य साधु भी और माँ को प्रणाम कर गए। कुछ देर विश्राम करने के बाद माँ ठाकुर घर में गईं। पूजा का आयोजन पहले से ही कर रखा गया था। अपने मन-मुताबिक ठाकुर-पूजा करके माँ बाहर निकल आईं।

उन्होंने कहा, "बच्चों ने तो सुबह से ही कुछ नहीं खाया है। सब में प्रसाद बाँट दो।"

माँ और गुलाब माँ को मिस्री का पन्ना, ठाकुर के प्रसाद का फल अर्पित करके नंदलाल बाकी प्रसाद रसोई में ले गए।

सुशील ने हाथ धोने का पानी आगे कर दिया। माँ हाथ-मुँह धोकर लौट आईं।

प्रसाद की कटोरी माथे से लगाकर माँ ने आवाज दी, "सुशील, आशुतोष! आओ, तुम दोनों भी प्रसाद ले लो।"

माँ का आदेश पाकर दोनों लोग घुटने मोड़कर बैठ गए और ठाकुर का प्रसाद अपने-अपने माथे से लगा लिया।

थोड़ी देर बाद जब भोग की तैयारी पूरी हुई, माँ ने अपने हाथों से ठाकुर को भोग लगाया, उनकी सेवा की और शयन कराया।

पहले ऐसा होता था। माँ अगर अपने हाथों से भोग नहीं लगाती थीं तो ठाकुर अन्य किसी के हाथों भोग ग्रहण ही नहीं करते थे।

ठाकुर-घर के सामने के दालान में माँ और गुलाब माँ के लिए दोपहर के खाने का इंतजाम किया गया है। नंदलाल ने पहले दूध में भात साना, उसमें नारियल के लड्डू, आम और चीनी मिलाई।

माँ ने कहा, "नंद, ऐसा करो, तुम एक कटोरी ले आओ। हम इतना सारा नहीं खाएँगी। कटोरी में बस, थोड़ा सा छोड़ दो, बाकी बच्चों को दे दो।"

माँ के कहने पर नंदलाल पत्थर का एक बड़ा सा कटोरा ले आए। भात सानने के बरतन में थोड़ा सा रखकर माँ ने बाकी आहार उस कटोरी में ही छोड़ दिया।

माँ का प्रसाद लेकर नंदलाल अंदर चले गए। खाना खाते-खाते माँ सबके हाल-समाचार पूछती रहीं—कौन कहाँ रहता है? क्या खाता है? कौन कहाँ सोता है? कौन ठाकुर की पूजा

करता है? वगैरह ढेरों सवाल!

आहार निपट जाने के बाद माँ के विश्राम की व्यवस्था की गई। फर्श पर एक चटाई बिछा दी गई। चटाई पर लेटते ही गुलाब माँ सो गई। नींद में वे बेतरह खर्राटे लेती थीं। उनकी इस आदत की बहुत से लोगों की जानकारी थी।

माँ ने अधलेटी होकर कहा, "जाओ बच्चो, तुम लोग भी खा आओ।"

सुशील और आशुतोष भी बारी-बारी से जाकर खाना खा आए।

शाम 4 बजे माँ ने ठाकुर को जाग्रत् किया। माँ के लिए मुरमुरे, गुड़-बताशों के हलके-फुलके नाश्ते का इंतजाम किया गया।

नाश्ता करने के बाद ही माँ वापस लौटने की तैयारी शुरू कर दी।

अपना पोटला-पोटली समेटकर, गुलाब माँ को साथ लेकर माँ तैयार हो गईं। योगीन महाराज उन लोगों को लेकर गंगाघाट की ओर जाने वाले थे। वहाँ नाव उन लोगों का इंतजार कर रही थी।

ऐसे में कृष्णलाल महाराज ने आकर सूचित किया कि राखाल महाराज की इच्छा है कि वापस जाने से पहले माँ मठ की नई जमीन पर अपनी चरण-धूलि देती जाएँ।

यह संदेशा पाकर माँ ने भी कहा, "चलो, वहाँ भी हो लूँ। मेरी भी वह जमीन देखने की खूब इच्छा है।"

योगीन महाराज ने कहा, "माँ, ऐसा करें, आप नाव से चली जाएँ, मैं पैदल-पैदल आता हूँ।"

नए मठ की जमीन पर माँ की अभ्यर्थना के लिए पहले से ही बहुत से साधु वहाँ खड़े थे। नाव से उतरकर माँ ने मठ की नई जमीन पर पाँव रखा।

नए मठ की जमीन ऊबड़-खाबड़ थी। जहाँ-तहाँ बेखप्पा दलान। जमीन बराबर करने के लिए ढेरों मिट्टी की जरू रत पड़ने वाली थी।

"सावधानी से पाँव बढ़ाएँ, माँ !" राखाल महाराज ने आग्रह किया।

माँ के साथ-साथ ही निवेदिता, मिस मैकलाउड और मिसेज बुल भी चल रही थीं।

इन्हीं कुछ दिनों से मारग्रेट और उनकी साथिनें मठ के छोटे मकान में रह रही हैं।

गंगा-घाट पर बेलूर गाँव कभी नेपाल महाराज के काठ का डिपो हुआ करता था। महाराज के प्रतिनिधि विश्वनाथ उपाध्याय जब वे यहाँ होते थे। वे श्रीरामकृष्ण के कृपाधन्य थे। जब वे यहाँ होते थे तब कभी-कभी दक्षिणेश्वर भी पहुँच जाते थे। ठाकुर उन्हें प्यार से 'कैप्टेन' पुकारते थे।

एक दिन कैप्टेन साहब ने ठाकुर से फरमाइश की, "नदी के उस पार बेलूर चलें। वहाँ नेपाल राजा का ठाठगोला घूम आएँ।"

कोई अगर कभी उन्हें कहीं ले जाने की इच्छा जाहिर करता तो ठाकुर को बेहद खुशी होती थी। वे झट राजी हो जाते थे और साथ जाने के लिए हमेशा अपने पाँव बढ़ाए रहते थे। कहीं घूमने जाते हुए ठाकुर हमेशा पूरी तैयारियों और व्यवस्था के साथ जाते थे धुली-धुलाई तहाई हुई पतली लाल किनारेदार धोती और लॉनाक्लॉथ का कुरता! बदन पर मोलस्किन की चादर लिपटी हुई। पैरों में पॉलिश किए हुए जूते या चप्पल! हाथ के बटुए में कबाब चीनी के रूप में खास मसाला होता था। घूमने जाते समय ठाकुर कभी मुख-शुद्धि लेना नहीं भूलते थे।

उस बार ठाकुर नाव पर सवार होकर कैप्टेन के साथ नेपाल राजा का काठ गोला देखने के लिए बेलूर जा पहुँचे। काठगोला में बैठकर ठाकुर काफी देर तक गपशप भी करते रहे। बेहद कम समय में सबके साथ घुल-मिल जाने की अद्भुत क्षमता थी उनमें। उस दिन कैप्टेन ने उन्हें मिठाई खिलाई थी। यह सारी कहानी माँ ठाकुर की जुबानी ही सुन चुकी थीं।

किसी समय ठाकुर वहाँ आए थे। आज उसी जगह नया मठ तैयार हो रहा है। माँ को लगा, यहाँ, इस जगह में ठाकुर का ढेर-ढेर आशीर्वाद बिखरा हुआ है। माँ परम उमंग से नए मठ की जमीन पर घूमते-घूमते किस तरफ क्या है, छोटी-से-छोटी बात की जाँच-पड़ताल करती रहीं और राजा महाराज उनके सभी सवालों का जवाब देते जा रहे थे।

दक्षिण की तरफ के मठ की जमीन पर अंदर प्रवेश करने के लिए प्रवेश द्वार था। उस तरफ जमीन-भराई का काम शुरू हो चुका है। ऊबड़-खाबड़ जमीन को समतल करने में प्रचुर भराव की जरूरत है। ईंट भट्ठों की रविश लाकर वह जमीन भरी जा रही है। इस पर करीब 4 हजार रुपयों का खर्च आएगा। पगडंडी पकड़कर उत्तर की तरफ आगे बढ़ते ही नारियल के पेड़ों से घिरी छोटी सी एक पोखर पड़ी थी। पोखर का नाम था—गोलपुकुर। उसके बाद पश्चिम में झोंय-जंगल और बाँस के झाड़। सड़क के दोनों दोनों तरफ जंगलों से काफी लंबा-चौड़ा मैदान। मैदान के पश्चिम में भी एक पोखर। नाम—पद्मपुकुर! पोखर के चारों ओर नारियल और आम के पेड़। छायामय शांत परिवेश! पोखर में कमल-कुमुद खिले हुए।

गंगा की तरफ तीन-तीन देवदारु के पेड़। इसके अलावा खजूर, अमरूद, गुलची फूलों के पेड़। मौसम के समय पेड़ों तले खजूर, अमरूद, गुलची फूल पड़े रहते हैं। जरा इस पर आम और कटहल के पेड़। उन पेड़ों के करीब ही अशोक और नीम के पेड़!

आम, नारियल, ताड़, केले, अरबी पेड़ों के झोंय-जंगल के बीच से होकर आगे बढ़ते ही, भूमिखंड के लगभग उत्तरी छोर पर दो एक-मंजिले जर्जर घर। करीब ही एक और पोखर मौजूद था। परिवार में पेड़ के पत्ते गिर-गिरकर। ऊपर तक भरे हुए। पोखर का नाम—सड़ियल पोखर। पोखर की चारों तरफ नारियल के पेड़। बड़े मकान के उत्तरी हिस्से को जोड़ता हुआ एक लंबा बरामदा।

इस मकान के उत्तर-पश्चिम की तरफ कर्मचारियों के रहने के लिए एक छोटा सा लंबा कमरा मौजूद है।

वहाँ पैदल-पैदल चलते हुए माँ ने कहा, "जानते हो, मेरी आँखें हमेशा यही देखती रहती थीं कि गंगा के इस पार, उस जगह ठाकुर रहा करते हैं। यहाँ ठाकुर वास करते हैं।"

इस तरह माँ एक बार बोध गया गई हुई थीं। वहाँ उन्होंने देखा था, वहाँ के मठ में अतुल ऐश्वर्य भरा पड़ा था और इसकी तरफ उनके आत्मत्यागी संतानों के लिए स्थायी आश्रमों का अभाव था। अन्न-वस्त्र का अवर्णनीय अभाव था और मठ के संचालन के लिए असीम शारीरिक क्लेश वगैरह का विपरीत चित्र संघ-जननी को बेतरह विचलित कर गया था।

इस संघ को सुप्रतिष्ठित देखने के लिए उन्होंने प्रभु से बार-बार प्रार्थना की थी।

घूम-घूमकर जमीन देखते हुए माँ ने धीमी आवाज में कहा, "अहा, इसके लिए ठाकुर के सामने कितना-कितना रोई हूँ, कितना-कितना आज करती रही। तभी तो उनकी कृपा से आज यह सब मठ-वठ...सब कुछ हुआ।"

बातें करते-करते माँ घाट के करीब चली आईं। ढलती हुई धूप अब बुझनेवाली थी। और कुछ ही देर में माँ बाग बाजार की ओर रवाना होने वाली थीं। माँ को विदा देने के लिए घाट के सामने मठ के सभी लोग खड़े थे। यह देखकर माँ परम आनंद से भर उठीं।

माँ ने अपार खुशी से कहा, "चलो, इतने दिनों बाद बच्चों के लिए सिर ढकने की जगह बनी: ठाकुर ने इतने दिनों बाद हमारी तरह मुँह उठाकर देखा तो सही!"

3 मई, 1898

जितनी तो प्लेग की महामारी नहीं फैली थी, उससे कहीं ज्यादा अफवाह फैली हुई है। मारण-रोग के डर से लोग कलकत्ता छोड़कर भाग रहे हैं।

स्वामीजी आज ही कलकत्ता लौटे हैं। सेहत ठीक करने के लिए वे दार्जिलिंग गए थे। वहाँ वे मिस्टर एस.एन. बैनर्जी के यहाँ मेहमान बनकर ठहरे थे। मिस मूलर और स्वामी अखंडानंद वहाँ से डेढ़ मील दूर रोज बैंक के घर में ठहरे थे। हर दिन सुबह-सुबह स्वामीजी मिस मूलर के यहाँ कॉफी पीने पहुँच जाते थे।

हावड़ा स्टेशन से बेलूर मठ लौटते ही स्वामीजी सीधे बाग बाजार माँ ठकुराइन के घर आ पहुँचे।

प्लेग के बारे में सारा कुछ सुनने-समझने के बाद स्वामीजी ने कहा, "पहले जन-सचेतनता बढ़ाने की जरूरत है।" उन्होंने बँगला और हिंदी में परची छपाने की सलाह दी। प्रचार के कामकाज की देख-रेख का जिम्मा उन्होंने निवेदिता को सौंप दिया।

सबके सामने ही स्वामीजी ने कहा, "काली मैया के अस्तित्व के बारे में कितने ही लोग व्यंग्य-ताने मारते हैं; लेकिन देखो, मैया प्रजागण के बीच उद्भूत हुई हैं। मगर डर के लोगों को कूल-किनारा नहीं सूझ रहा है और इधर मृत्यु का दंडदाता सैनिक आवाजों पर आवाजें दिए जा रहा है। कौन कह सकता है कि भगवान् शुभ की तरह ही अशुभ रूप में अवतार नहीं लेता? लेकिन एकमात्र हिंदू ही उन्हें अशुभ रूप में भी पूजा करने का साहस कर पाता है!"

थोड़ा ठहकर उन्होंने फिर कहा, "सिर्फ प्रचार-पत्र छापने-बाँटने से काम नहीं चलेगा। एक सेवा-केंद्र तैयार करना होगा।"

यह सुनकर वहाँ उपस्थित एक गुसभाई ने सवाल किया, "लेकिन इसके लिए रुपए कहाँ से आएँगे?"

गुरुभाई की ओर देखते हुए स्वामीजी ने एक पल का भी समय लिये बिना जवाब दिया, "क्यों? जरूरत पड़ी तो नए मठ की जमीन-जगह सब बेच दूँगा। हम सब तो फकीर बंदे हैं।

मुट्ठी भर भीख माँगकर, पेड़ तले सोकर दिन गुजार सकते हैं। अगर जगह-जमीन बेचकर, हजारों-हजार लोगों की जान बचाई जा सकती है तो क्या जमीन, क्या जगह?"

उनकी तबीयत ठीक नहीं है। उत्तेजना बढ़ती जा रही है। बैसाख की गरमी में वे पसीने-पसीने हो रहे थे।

विदेश से लौटने के बाद से ही स्वामीजी की तबीयत ठीक नहीं चल रही है। डॉक्टर ने उन्हें सेहत ठीक करने के लिए किसी ठंडे-पहाड़ी आवास में रहने की सलाह दी है।

दार्जिलिंग से वापस लौटते ही उन्हें मिस्टर सेवियर का पत्र मिला है। मिस्टर सेवियर ने जानकारी दी है कि वे और उनकी पत्नी अल्मोड़ा में आश्रम स्थापित करना चाहते हैं। इसलिए उन दोनों ने स्वामीजी को अल्मोड़ा आने के लिए विशेष अनुरोध किया है।

वहाँ एक मठ-आश्रम बन जाए तो बुरा नहीं रहेगा। हिमालय के करीब वह जगह काफी एकांत, शांत और खूबसूरत है। ध्यान के लिए भी काफी उपयोगी है। वहाँ की आबो-हवा भी काफी मनोरम है।

प्लेग का मामला निपट जाए तो स्वामीजी जल्दी ही वहाँ चले जाएँगे। अगर वे वहाँ गए तो सभी लोगों को वहाँ ले जाएँगे। वह जगह सभी लोगों को देखनी चाहिए, यह जरूरी है। माँ-ठाकुराइन के घर में भी इस बारे में थोड़ी-बहुत बातचीत हुई। यह तय हुआ कि स्वामीजी के साथ पहले स्वामी तुरीयानंद, स्वामी निरंजनानंद, स्वामी सदानंद, स्वामी स्वरूपानंद, मिसेज ऊली बुल, कलकत्ता के अमेरिकन काउंसिल जनरल की पत्नी मिसेज पीटरसन, मिस मैकलाउड और निवेदिता जाएँगे।

6 जून, 1898. सोमवार

स्वामीजी लोग इन दिनों अल्मोड़ा में हैं।

स्वामीजी सुबह चाय की मेज के सामने बैठे थे।

उन्होंने कहा, "उस बूढ़े साधु को मैं इतना प्यार क्यों करता था, जानते हैं? उन्होंने गेहुअन साँप का दंश झेलकर भी कहा, 'यह तो प्रियतम की वार्त्ता है।'

सभी खामोश!

बूढ़े साधु पवहारी बाबा का निधन हो गया था।

उन्होंने स्वेच्छा से आत्माहुति दे डाली थी। स्वामीजी उन्हें अपने गुरु श्रीरामकृष्ण की तरह ही प्यार करते थे।

सेवियर दंपती के साथ वे कुछ दूर तक सैर पर निकल गए थे। पिछली शाम को ही वे लोग लौटे थे, वह भी अतिशय आच्छन्न हालत में।

"गुडविन का निधन हो गया है।" चाय की मेज के सामने बैठी मिस मैकलाउड ने ही पहले यह खबर दी।

चाय का कप परे हटाकर स्वामीजी कुछेक पल उनके चेहरे की तरफ देखते रहे।

थोड़ा ठहरकर उन्होंने शांत स्वर में पूछा, "कब?"

जवाब देते हुए मिस मैकलाउड की आवाज मारे रुलाई के अवरुद्ध हो आई। उन्होंने बमुश्किल कहा, "दो जून को टेलीग्राम से खबर आई है।"

कुछ देर बिलकुल खामोश रहने के बाद स्वामीजी ने शांत आवाज में कहा, "मेरा दाहिना हाथ चला गया।" उसके बाद मेज से अखबार उठाकर उन्होंने अपनी आँखों के आगे खोल लिया। समूचे परिवेश में मातमी सन्नाटा छाया रहा।

टेलीग्राम कल आया था। स्वामीजी मौजूद नहीं थे, इसलिए सदानंद महाराज ने वह जरूरी टेलीग्राम खोलकर पढ़ा था। उस टेलीग्राम में स्वामीजी के प्रिय शिष्य गुडविन की मौत की खबर थी। सदानंद महाराज अपने आँसू रोक नहीं पाए। पिछला दिन ही विषाद भरा था।

गुडविन के बारे में अगर कहने पर आएँ तो बातों पर बातें, ढेरों बातें कही जा सकती हैं। स्वामीजी के अमेरिकी भक्तों ने महसूस किया कि उनके आचार्यदेव के अमूल्य उपदेशों का संग्रह और संरक्षण बेहद जरूरी है—सिर्फ अपने लिए ही नहीं, भावी पीढ़ी के लिए भी।

इसलिए न्यूयॉर्क के दो अखबार 'हेरॉल्ड' और 'वर्ल्ड' में स्टेनोग्राफर की माँग करते हुए श्रेणीबद्ध कर्मी के लिए विज्ञापन दिया गया।

विज्ञापन पढ़कर जो कई लोग हाजिर हुए थे, उनमें जोसिया जॉन गुडविन नामक अंग्रेज नौजवान अन्य तय था। उम्र पच्चीस, बदन पर स्मार्ट पोशाक, खूबसूरत ढंग से छँटे हुए बाल, ताव दी हुई मूँछें, बड़ी-बड़ी आँखें, जिज्ञासु दृष्टि।

काम में नियुक्त किए जाने के बाद धीरे-धीरे स्वामीजी को प्यार करने लगा। कई दिनों के अंदर ही यह वेतनभोगी कर्मचारी, एक निवेदिता-प्राण शिष्य में परिणत हो गया।

श्रुति लिपिक की नौकरी में रहते हुए गुडविन स्वामीजी के साथ चरखी की तरह अमेरिका, इंग्लैंड, यूरोप के शहरों का भ्रमण करते रहे। उन दिनों स्वामीजी सुबह-शाम दिन में दो-तीन क्लासें लेते थे।

पूरे हफ्ते भर में उनकी क्लासों की संख्या कम-से-कम 20 होती थी। कभी-कभी इससे भी अधिक ! हर रविवार को प्रश्नोत्तर पर्व आयोजित होता था। इसके साथ कारकान अलग से —स्वामीजी के कारकानों के साथ होड़ लेते हुए गुडविन 'कर्मयोग', 'भक्तियोग' और 'राजयोग' लिपिबद्ध किए रखते थे।

इस स्टेनोग्राफर ने अपने प्रिय स्वामीजी को कभी नहीं छोड़ा। पिछले वर्ष लगभग जनवरी महीने में गुडविन स्वामीजी के साथ भारत आ पहुँचे। लेकिन यहाँ की आबो-हवा से तालमेल रखने में उन्हें असुविधा हो रही थी। चूँकि वे विजातीय थे, इसलिए यहाँ के सुंदर-सुंदर मंदिरों में पैर रखने की अनुमति नहीं थी। इसलिए उनके मन में अभिमान जमने लगा। यही वजह दिखाकर उन्हें घर की रसोई में भी दाखिल होने की अनुमति नहीं थी। तब गुडविन अपना दिमाग ठिकाने नहीं रख पाते थे। दो-दो अभिमान समेटे वे बुदबुदा उठते थे —'भारत से तो इंग्लैंड ही भला!'

स्वामीजी की इच्छा थी कि वे अपनी एक पत्रिका निकालें। वे चाहते थे कि कलकत्ता से बँगला में एक पत्रिका निकाली जाए और मद्रास से अंग्रेजी में एक पत्रिका प्रकाशित की जाए। दूसरी पत्रिका के बारे में आलासिंगा पेरुमल से बातचीत भी हुई। मासिक पत्रिका के संपादक का दायित्व गुडविन को सौंपा जाए, इसकी जानकारी भी उन्होंने आलासिंगा को दे दी थी। वह पत्रिका प्रकाशित नहीं हो सकी। लेकिन स्वामीजी ने गुडविन को 'ब्रह्मवादिन' पत्रिका के कार्य से मद्रास भेज दिया। उस काम में शामिल होकर कार्य-दक्ष गुडविन उस कार्य को करने में मगन हो गए। पत्रिका के कार्यों के साथ-साथ गुडविन वहाँ 'रामकृष्ण मठ' निर्माण के मामले में रामकृष्ण की भी मदद करते थे। 'ब्रह्मवादिन' पत्रिका में पाठकों की दिलचस्पी बढ़ाने के लिए गुडविन की उस पत्रिका में हर महीने स्वामीजी का कोई नया व्याख्यान प्रकाशित किया जाए। यहाँ के लोगों की काम में ढिलाई और धीमी गति से काम करने का स्वभाव देखकर कामकाजी इनसान गुडविन को भला नहीं लगता था। 'ब्रह्मवादिन' के कार्यों की सीमा में ही अटके रहना गुडविन के स्वभाव के विपरीत था। इसलिए उन्होंने 'मद्रास मेल' अखबार में पत्रकारिता का अतिरिक्त कार्य भी अपने जिम्मे ले लिया। उनकी युक्ति थी कि उससे उनकी आमदनी भी बढ़ेगी और स्वदेश में रह रही अपनी

माँ को भी इस देश में ले आएँगे। अपना यह इरादा गुडविन ने मिसेज ऊली बुल को भी खत लिखकर बताया था।

ऐसी ढेर-ढेर बातें ही स्वामीजी को आज याद आती रहीं। स्वामीजी ने एक बार लंदन के थियोसोफिस्ट हॉल में निरामिष आहार पर व्याख्यान दिया था। गुडविन भी पूरी-पूरी तरह निरामिषभोजी हो उठा था।

किसी एक रात को खाने में मछली खाते देखकर गुडविन सवाल कर बैठा, "आप तो निरामिष के पक्ष में प्रचार करते हैं, निरामिष आहार पर भाषण देते हैं, फिर अभी आप मछली क्यों खा रहे हैं?"

स्वामीजी ने हँसते-हँसते जवाब दिया, "अरे भइया, महाराजिन मछली ले आई। अगर मैं नहीं खाता तो वह नाली में फें क देती। मैंने न हो, अपने पेट में फेंक दिया। इसमें कोई दोष कहाँ से हो गया? संस्कृत में कहा गया है—'अहं न भोक्ता' मैं स्वयं कभी नहीं खाता। यह देह ही आधार है। इसमें ही सारी सामग्रियों की आहुति दी जाती है।" स्वामीजी की यह बात गुडविन को पसंद नहीं आई।

उन्होंने कुछ नाराजगी के भाव में कहा, "यह संस्कृत में आप क्या-क्या किड़ मिड़-किड़मिड़ बोल जाते हैं, मेरी समझ में ही नहीं आता।"

स्वामीजी जब उन्हें वेदांत में से पंक्तियों सुनाने लगते थे तो वे और भड़क जाते थे।

उन्होंने तैश भरे लहजे में कहा, "आप अपनी बातों से मुझे कहने से रोक रहे हैं। आप यह बताएँ कि आप मछली क्यों खा रहे हैं?"

शिष्य का गुस्से से तमतमाया चेहरा देखकर स्वामीजी को खासा आनंद आने लगा। किसी गंभीर भाव के जरिए नहीं, सरल बालक की तरह मंद-मंद मुसकराते हुए स्वामीजी ने उस दिन अपने शिष्य को नाराज कर दिया था।

...यही सब सोचते-सोचते स्वामीजी की आँखों से कई बूँद आँसू ढुलक पड़े।

मद्रास में चूँकि अत्यधिक गरमी पड़ती थी, इसलिए गुडविन ऊटी यानी ऊटकमंड चले आए थे।

बीस दिन पहले की बात है। गुडविन ने किसी का निषेध नहीं माना, जाहिल-गँवार की तरह मूसलधार बरसात में ही क्रिकेट मैच देखने चले गए। असल में वे क्रिकेट-प्रेमी थे, क्रि केट के दीवाने! खेल देखकर जाकर के बारिश में खूब भीगे थे। खेल देखने के नशे में उन्होंने

एक बार भी कोट नहीं बदला। अगले दिन उन्हें बुखार आ गया। उसी बुखार में वे विधान परिषद के सदस्य मिस्टर रस की शव-यात्रा में भी शामिल हुए। वहाँ वे दुबारा बरसात में भीगते रहे। उनका बुखार तेज हो गया।

उस मौसम में ऊटी की आबो-हवा बेहद बिगड़ी हुई थी। थोक भाव से इन्फ्लुएंजा, टायफाइड और दस्त रोग फैला हुआ था। 'मद्रास मेल' अखबार के कार्यालय में जाने किसने खबर दी कि 'गुडविन को बुखार है।' 'मद्रास मेल' के रिपोर्टर मिस्टर ब्रेमनर उसी दिन उन्हें देखने पहुँच गए। वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि गुडविन का तन-बदन तेज बुखार से तप रहा है। वे बेसुध सो रहे हैं, आँय-बाँय बक रहे हैं। बिस्तर छोड़कर बार-बार उठकर बैठ जाते हैं। दवा वगैरह कुछ भी नहीं ले रहे हैं। उन्होंने तत्काल 'मद्रास मेल' कार्यालय को तार भेजा। वहाँ से खबर पाकर आलासिंगा पेरुमल गुडविन को देखने के लिए दौड़ पड़े। अगले दिन गुडविन को अस्पताल में दाखिल कराया गया। रात को वे चल बसे!

अपनी आँखों की काँटों में झिलमिलाते हुए आँसू पोंछकर स्वामीजी ने निवेदिता के हाथ में थामे हुए रजिस्टर की तरफ देखते हुए पूछा, "तुम कुछ लिख रही हो, निवेदिता?"

स्वामीजी के हाथों में वह रजिस्टर थमाते हुए निवेदिता ने जवाब दिया, "कल दिन भर बार-बार गुडविन का खयाल आता रहा। उसका चेहरा आँखों में तैर रहा है...अभी भी विश्वास नहीं हो रहा है कि गुडविन नहीं रहा...!"

रजिस्टर के पन्नों पर नजरें घुमाते हुए स्वामीजी ने देखा कि एक पन्ने पर बिखरी-बिखरी सी कुछेक पंक्तियाँ लिखी हुई हैं। पंक्तियाँ त्रिपदी छंद में लिखी हुई थीं।

"निवेदिता, यह रजिस्टर कुछ देर मैं रख लूँ?" स्वामीजी ने पूछा।

निवेदिता ने सिर हिलाकर सहमति जताई।

स्वामीजी हाथ में वह रजिस्टर उठाए चाय की मेज से उठ आए और अपने कमरे में चले गए।

Soul...star...strewn path...blissfull...

पढ़ने की मेज के सामने बैठकर स्वामीजी ने उन अस्त-व्यस्त पंक्तियों को दुबारा नए सिरे से लिखा—

> Speed forth, O soul! upon thy star-strewn path;
>
> Speed, blissfull one! where thought is ever free,

Where time and space, no longer mist the view,

Eternal peace and blessing be with thee!

Thy service true, complete thy sacrifice,

Thy home the heart of love transcendent find;

Remembrance sweet, thay kills all space and time,

Like alter roses fill thy place behind

The bonds are broke, thy quest in bliss is found,

And one with that which comes as death and life;

Thou helpful one! unselfish e'er on earth,

Ahead! still help with love this world of strife!

कविता का नाम—'Requiescat in pace'।

उस कविता के अंत में स्वामीजी ने गुडविन की शोक-संतप्त माँ को पत्र में लिखा—"उनका जितना मैं कर्जदार हूँ, वह कभी भी चुकाया नहीं जा सकता। मेरे कोई एक भी चिंतन या विचार पढ़कर अगर कोई शख्स लाभान्वित होता है तो यह जान लें कि उस चिंतन या विचार का एक-एक शब्द मिस्टर गुडविन की अथक और निस्स्वार्थ परिश्रम के सुफल से ही प्रकाशित हो सका है। मेरे लिए उन्हें खो देने का मतलब है फौलाद जैसे किसी सच्चे मित्र को खो देना। मैंने अपराजेय, भक्ति से संपूर्ण शिष्य को खो दिया है। मैंने ऐसे एक कर्मी को गँवा दिया है, जो नहीं जानता था कि थकान किसे कहते हैं और इस धरती पर मैने विरल मनुष्यों में से किसी ऐसे एक जन को खोया है, जो सदा-सर्वदा ही दूसरों के लिए जीवन-धारण करते हैं। उन्हें खोकर पृथ्वी ने एक अनमोल संपदा खो दी है।"

पवहारी बाबा! उसके बाद गुडविन! एक के बाद एक मृत्यु-संवाद...! अल्मोड़ा स्वामीजी के लिए असहनीय हो उठा।

11 जून, 1898

ठाकुर को गले का कैंसर हो गया था। कंठ-स्वर धीरे-धीरे क्षीण होता जा रहा है। उन्हें बात करने की मनाही है। मगर उन्हें बात करना बेहद प्रिय है। वे उनींदी नजरों से अपने आस-पास बैठे लोगों को निहारते रहते थे। उनकी आँखें देखकर लगता था जैसे वे कितनी-कितनी बातें कहना चाहते हों।

हाड़-हाड़ जर्जर देह! पसलियों की एक-एक हड्डियाँ गिनी जा सकती हैं। दिनों-दिन उनकी देह बिछावन में मानो चिपकती जा रही है। उनकी जीवनी शक्ति धीरे-धीरे कम होती जा रही है। अब तो वे अपने आप चलने-फिरने की ताकत भी खोते जा रहे हैं। जरा-जरा सी में उन्हें ठंड लग जाती है। इसलिए हमेशा उनकी बड़े एहतियात से देख-रेख करनी पड़ती है, बचा-बचाकर रखना पड़ता है, वरना उनकी खाँसी बढ़ जाती है। खाँसी के दौरे के साथ मुँह से मवाद, खून व कफ गिरने लगता है। इस समय रोगी के चेहरे की तरफ देखा नहीं जाता।

सेहत की पुष्टि के लिए उन्हें भात के साथ मांस या सीप का शोरबा दिया जाता है। भात गले के नीचे नहीं उतरता। खाने बैठते ही गले में दर्द की शिकायत करते हैं। इसलिए माँ खुद अपने हाथों से सुनुही में शोरबा उड़ेलकर उन्हें मिला देती हैं।

ठाकुर के संन्यासी संतान बारी-बारी से रात में जागकर उनकी सेवा करते हैं।

अंतिम समय में एक दिन ठाकुर खीर खाने की जिद ठान बैठे। दूध उनको बिलकुल बरदाश्त नहीं होता था। फिर भी, उन्हें खीर खिलाया गया। वह खीर उनके गले से नीचे नहीं उतरा।

वैसे ठाकुर से मिलने के लिए बहुतेरे लोग आया करते थे। उनमें से बहुतेरे लोग उनके परम भक्त होते हुए भी उनके करीब आने से डरते थे। उन लोगों का खयाल था कि उनका रोग बेहद छुतहा है।

अभी उसी दिन उन्हीं लोगों में से किसी एक ने ठाकुर की खाई हुई खीर की कटोरी की बची-खुची खीर फेंक देने को कहा।

उसकी बात सुनकर स्वामीजी ने उस कटोरी की बची-खुची खीर खुद खा लिया और कहा, "ठाकुर का प्रसाद अमृत है।"

कल स्वामीजी, निवेदिता और मैकलाउड से ठाकुर के बारे में इसी तरह की ढेर-ढेर बातें करते रहे थे।

आज स्वामीजी अल्मोड़ा चले जाएँगे। पहले वे काठगोदाम जाएँगे, वहाँ से भीमताल होते हुए पंजाब के रावलपिंडी जाने की बात तय है। बाद में वारामूला होकर कश्मीर! स्वामीजी के साथ निवेदिता और मैकलाउड के भी जाने की बात है।

स्वामी स्वरूपानंद ने आकर स्वामीजी से कहा, "मिस्टर सेवियर मिलने आए हैं।"

तीन वर्ष हुए, 'अवेकेंड इंडिया' (प्रबुद्ध भारत) नामक एक सामयिक पत्रिका प्रकाशित होती रही है। उस पत्रिका के संपादन की जिम्मेदारी राजम अय्यर की थी। स्वामी के प्रोत्साहन पर वेदांतवादी इस नौजवान ने उस पत्रिका के संपादन के काम का संकल्प लिया था। पिछले वर्ष मई महीने में उनका निधन हो गया।

पत्रिका काफी खूबसूरत और आकर्षक ही निकल रही थी। इसी बीच इसके तीन हजार पाठक बन गए थे। स्वामीजी को भी यह पत्रिका काफी अच्छी लगी थी। लेकिन राजम की मौत के बाद वह पत्रिका बंद होने के कगार पर है।

स्वामीजी की इच्छा है कि पत्रिका विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित की जाए और इन पत्रिकाओं के जरिए श्रीरामकृष्ण व वेदांत की वाणियों का प्रचार हो। वे दैनिक अखबार निकालने पर भी विचार कर रहे हैं। अभी कल ही नैनीताल के मुहम्मद सरफराज हुसैन को उन्होंने खत लिखा है—"मैं अपने मानस-चक्षुओं से देख रहा हूँ, यह विवाद-विशृंखला-भेद भविष्य में पूर्णांग भारत बन जाएगा और वेदांती मस्तिष्क और इसलामी देह से संपन्न महा-महिमामय और अपराजेय शक्ति के साथ जाग-जाग उठा है।"

मिस्टर सेवियर ने स्वामीजी को अपना अभिप्राय बताया था कि वे भारत के कल्याण-कार्यों में व्रती होना चाहते हैं। भारतीय सेनावाहिनी का यह अफसर पाँच वर्ष काम करने के बाद इंग्लैंड वापस लौट गए थे। यूरोप से होते हुए स्वामीजी जब देश लौट रहे थे, तब उनके साथ सेवियर दंपती भी आए थे। भारत के अल्मोड़ा में बस जाना ही उनके आने का उद्देश्य था।"

स्वामीजी ने कहा, "बँगलादेश की जलवायु तुम दोनों से बरदाश्त नहीं होगी।" स्वामीजी चाहते थे कि मिस्टर सेवियर अल्मोड़ा के करीब ही कहीं बस जाएँ और 'प्रबुद्ध भारत' के आर्थिक संकट के मुहूर्त में पत्रिका के खर्च का जिम्मा वहन करने के मामले में स्वामीजी ने सेवियर दंपती से कह-सुनकर उन्हें राजी कर लिया। स्वामीजी नहीं चाहते कि 'प्रबुद्ध भारत' अखबार बंद हो जाए। संपादन के काम में स्वामी स्वरूपानंद काफी दक्ष हैं। उनके दायित्व में ही 'प्रबुद्ध भारत' नए रूप में प्रकाशित होगा। स्वामी तुरीयानंद अखबार के कामों में उनकी मदद करेंगे। 'थॉम्पसन हाउस' से अखबार का काम जारी रहेगा।

लेकिन नया अंक निकलने में अभी और दो महीने लगेंगे, इसी बात को ध्यान में रखकर काम शुरू हो गया है।

कुछ देर बाद स्वामीजी रवाना हो जाएँगे। मिस्टर सेवियर किसी जरूरी बातचीत के लिए मिलने आए हैं।

स्वामीजी ने मिस्टर सेवियर के हाथ में एक लिफाफा सौंपकर कहा, " 'प्रबुद्ध भारत' के लिए मेरी रचना!"

लिफाफा खोलकर मिस्टर सेवियर ने देखा, कागज पर एक कविता लिखी हुई थी—

Once more awake!

For sleep it was, not death, to bring thee life

A new, and rest to lotus-eyes for vision

Dairy yet, the world in need awaits, O Truth!

No death for thee!

Resume thy march,

with gentle feel that would not break the

Peaceful rest even of the roadside dust

That lies so law. Yet strong and steady,

Blissful, bold and free, Awakener, ever

Forward! sheak thy strring words.

Thy home is gone,

Where loving hearts had brought thee up and

Wathed with joy thy growth.but fate is strong-

This is the low-all things come back to the source

They shrung,their strength to renew.

Then start afresh

From the land of thy birth,where vast cloud-betted

Snows do bless and put their strength in thee.

For working wonders new. They heavenly

River tune thy voice to her own immortal song;

Deodar shades give thee eternal peace

And all above

Himala's daughter uma,gentle, pure,

The mother that resides in all as power

And life, who works all works and

Maker of one the world, where mercy

Opens the gate to truth and shows

The one in all, give the untiring

Strength, which is inginite love.

They bless thee all,

The seers great, whom age nor clime

Can claim their own,the fathers of the

Race, who felt the heart of truth the same,

And bravely tought to man ill-voiced or

Well.there servent,thoui hast got

The secret-is hut one.

Then sheak,O Love!

Before thy gentle voice serene, behold how

Visions melt and fold on fold of dreams

Departs to avoid, till truth and truth alone

In all its glory shines-

And tell the world-

Awake, arise and dream no more!

This is the land of dreams, where karma

Weawers unthreaded garlands with our thoughts

Of flowers swet or noxious,and none

Has root or stem, being horn in nought,which

The softest breath of truth drives haek to

Primal nothingness.Be hold,fnce

The truth! Let vision cease,

Or, if you can not, dream but truer dreams,

Which are eternal Love and service free.

कविता का शीर्षक था—'To The Awakened India'।

मिस्टर सेवियर ने स्वामीजी की तरफ देखा। उन्होंने देखा कि स्वामीजी मंद-मंद मुसकरा रहे हैं। उनकी आँखों में दृढ़ विश्वास झलक रहा था।

12 जून, 1898

मौसम चूँकि विदा ले चुका था, इसलिए जंगली गुलाब नजर नहीं आए। हाँ, कामिनी फूल जरूर दिखते रहे।

"काव्य में इस फूल के नाम का उपयोग प्रचुरता से किया गया है।" स्वामीजी ने कहा।

सामने भीमताल झील! पहाड़ों से उतरा हुआ जल-प्रपात इस झील के किनारे बैठ गए।

सूरज पश्चिम दिशा में ढलने लगा है। दोपहर ढुलककर शाम में बहुत जल्दी आती है।

"असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय

मृत्योर्मामृतः गमय

आविरावीर्म एधि रुद्र दक्षिणः मुखः

तेन माः पाहि नित्यम्।"

रुद्र संगीत की मूर्च्छना से निस्तब्धता टूट-बिखरकर किर्ची-किर्ची हो गई। स्वामीजी अपने मन की रौ में गा रहे हैं। उदात्त कंठ स्वर, अमृत ध्वनि बनकर चारों तरफ बिखर गया है। साक्षी बनी हैं कई-कई विदेशिनी!

सवाल सभी के मन में जागा है।

सिर्फ निवेदिता ने सवाल को जुबान दी, "इस गीत का अर्थ क्या है?"

"मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलो, अंधकार से प्रकाश के पथ पर ले चलो, हे स्वप्रकाश ज्योतिःस्वरूप रुद्र! तुम मेरे सामने आविर्भूत हो; तुम्हारा जो करुणापूर्ण दक्षिण चेहरा है, उसके द्वारा मेरी नित्य रक्षा करो।" अंग्रेजी में भावानुवाद करके स्वामीजी जरा ठिठक गए।

'आविरावीर्म एधि'—इस गंभीर भाव-द्योतक संस्कृत श्लोक का अंग्रेजी में अनुवाद करना सच ही मुश्किल है।

निवेदिता की ओर देखते हुए स्वामीजी ने कहा, "हे रुद्र! तुम सिर्फ अपने निकट ही स्व-प्रकाशित हो, तुम हमारे निकट भी आत्मप्रकाश करो।"

मिस मैकलाउड और मिसेज अली बुल बगल में ही बैठी हुई हैं। त्रिसुपर्ण मंत्र की कई पंक्तियों की आवृति करके स्वामीजी ने सभी लोगों को सुनाईं।

और कुछ देर बाद ही साँझ उतर आएगी। साँझ उतरने से पहले ही उन लोगों को डाक बँगला पहुँचना है। थोड़ी दूर और पैदल-पैदल चलना है।

स्वामीजी घोड़े की पीठ पर सवार हो गए। बाकी अन्य लोग भी अलग-अलग अपने-अपने घोड़ों पर चढ़कर बैठ गए।

पहाड़ी पर खड़े ऊँचे-ऊँचे पेड़ों की सुदीर्घ छाया सड़क पर बिछी हुई। अँधेरे-उजाले बढ़ रहे थे। घनी निस्तब्धता के बीच जल-प्रपात की लगातार झर-झर आवाज सुनाई दे रही थी।

स्वामीजी अपने मन की रौ में गा रहे हैं—"प्रभु, मेरे अवगुण चित ना धरौ।"

यह सूरदास का भजन है। भैरवी राग में, ठुमरी चाल में! यह गीत उन्होंने खेतड़ी के महाराज के प्रासाद में पन्ना बाई की आवाज में सुना था!

उनके संगियों के मुँह में जैसे जुबान ही न हो, निस्तब्ध रहना ही मानो इस परिवेश का तकाजा हो।

स्वामीजी गाते रहे—"समदरसी है नाम तिहारो, चाहो तो पार करौ।"

4 जुलाई, 1898

शंकर पर्वत का और एक नाम है—तख्त-ए-सुलेमान। समतल भूमि में प्रायः एक हजार फीट ऊँचे इस पहाड़ से कश्मीर घाटी बेहद खूबसूरत नजर आती है। यहाँ से आँकी-बाँकी बहती हुई डल झील भी नजर आती है।

लहर-लहर करके एक अमेरिकी झंडा भी फहरा रहा है। अनाड़ी हाथों से तैयार की गई ध्वजा नाव के ऊपर कील से जड़ दी गई है। झील के जल में तैरती हुई नाव, चिर-श्यामल पेड़ों की डाल और फूलों से सजी हुई! उत्सव-उत्सव भाव! आज 4 जुलाई है, अमेरिका का स्वतंत्रता दिवस।

स्वामीजी बहुत पहले ही नाव में आ बैठे थे। उनके हाथ में एक कॉपी, कॉपी में लिखी हुई एक कविता, अपने मन की रौ में हाथ में कलम थामे वे एडिट कर रहे थे। उन्होंने कविता का एक शब्द काटकर उसकी जगह कोई नया शब्द बैठा दिया।

मिसेज पीटरसन के साथ मिसेज अली बुल, मिस मैकलॉउड और निवेदित नाव पर आ पहुँचीं। उन सबने स्वामीजी को सुप्रभात ज्ञापित किया।

स्वामीजी ने मुसकराते हुए जवाब दिया, "गुडमॉर्निंग एवरीबॉडी। तुम लोगों के स्वतंत्रता-दिवस पर तुम लोगों का स्वागत है।"

नाव को इतनी सजी-धजी व सुसज्जित देखकर सभी खुश हुई।

नाव में कप-डिश पहले से ही रखी हुई थी। कोई एक कशमीरी लड़की केतली में चाय दे गई। अपने हाथों सबको साथ पिलाने के लिए स्वामीजी खुद ही आगे बढ़ आए।

मीनाकारी किए हुए एक बरतन की ओर इशारा करते हुए कहा, "इसमें मुरब्बा रखा हुआ है। बाद में दूँगा। लो, अभी चाय पी लो।"

वह लड़की दुबारा आई और सबके लिए गुच्छे-गुच्छे रंग-बिरंगे फूल दे गई। साथ ही सेब और चेरी फलों की डलिया रख गई।

स्वामीजी के निर्देश पर कश्मीरी मल्लाह नाव खेने लगा। नाव झील के शांत जल पर तैरती हुई आगे बढ़ने लगी। करीब पंद्रह दिनों पहले भूस्वर्ग देखने के लिए यात्रा शुरू हुई थी। चूँकि विदेशी महिलाएँ स्थानीय भाषा नहीं जानती थीं, इसलिए बारामूला में स्वामीजी को ही नाव की तलाश में निकलना पड़ा।

सात-आठ दिन पहले वे लोग क्षीरभवानी के मंदिर में गए थे। पत्थर की रेलिंगों से घिरे उस छोटे से झरने का जल दूधिया-श्वेत था। सैकड़ों धर्म-अभिलाषी तीर्थ-यात्रियों की भीड़।

उसी ओर सभी संगिनियों की दृष्टि आकर्षित करते हुए स्वामीजी ने कहा, "देखो, मंदिर के लिए स्थान-निर्वाचन के बारे में हिंदू कितने दक्ष थे। सभी मंदिर प्रायः ऐसी जगहों पर स्थित हैं, जहाँ देखने में बेहद भव्य और दिव्य लगते हैं।"

सैर पर निकलकर स्वामीजी अपनी विदेशी शिष्याओं से गपशप करते हुए चलते रहते थे।

कल निवेदिता ने ही बात छेड़ी थी।

उन्होंने शिकायत के लहजे में कहा, "यहाँ अमेरिका का कहीं कोई राष्ट्रीय झंडा नहीं है। अगर होता तो नाश्ते के समय हमारे दल के अमेरिकी यात्री अपने इस राष्ट्रीय त्योहार का अभिनंदन कर पाते।"

यह बात स्वामीजी के कानों में भी पड़ी थी। वे शाम को ही बाहर निकले और किसी कश्मीरी दर्जी को अमेरिकी झंडा तैयार करने का ऑर्डर दे आए। झंडे का रंग और डिजाइन उन्होंने अपने हाथों से आँककर समझा भी दिया। दर्जी वह झंडा तैयार करने आज सुबह पहुँच भी गया था।

स्वामीजी ने कहा, "न आज के दिन को यादगार बनाने रखने के लिए मैंने एक कविता भी लिखी है। तुम लोग सुनोगे?"

सभी लोग समवेत स्वर में बोल उठे, "जरूर! जरूर!"

पिछली शाम से ही स्वामीजी का मन कविता के भावों से ओत-प्रोत था। वे एक प्रश्न का उत्तर खोजने में डूबे हुए थे—मुक्ति क्या है? उत्तर की तलाश में वे अपनी अंतश्चेतना की अली-गली में घूमते-भटकते उन्हें अनुभूति हुई कि मुक्ति ही आनंद है और आनंद ही ईश्वर है। इस उपलब्धि ने उड़ते हुए बादलों की तरह अपरूप छंद-चित्र तैयार कर दिया।

झील की निर्जन जलराशि को चीरती हुई पत्र-पुष्प शोभित नाव आगे बढ़ती रही। स्वामीजी की आवृत्ति गूँज उठी—

Behold, the darkcloud melt away,

That gathered thick at night and hung

So like a gloomy fall above the earth!

Before thy magic touch, the world

Awakes.The the bird in chrus sing.

The flowers raise their star-like crowns-

Dew-set, and wave the we, come fair.

The lakes are opening wide in love

There hundred thousand lotus eyes

To welcome the, with all their depth.

All haic to thee , thoui lord of light!

A welcome new of thee, today,

Oh sun! Today thoui sheddest liberty!

Be think the how the world did wait,

And search for thee, through time and clime.

Some gave up home and love of friends ,

and went in guest of thee, self-banished,

Through dreary oceans, through hrimeral forest,

Each step a struggle for their live or death;

Then come the day when work hore fruits,

And worship , love and sacrifice,

Fulfiled, accepted , and complete.

Then there, propitious, rose to shed

The light of fredom on mankind.

Move on, oh lord, in thy resistless path!

Till thy high noon O'er spreads the world.

Till every land reflects thy light,

Behold their shackles broken and

Know, in springing joy, their life renewed!

कविता को नाम दिया—'To the fourth of july'।

शांत पहाड़ की बगल में झील। कोई फिरोजी रंग का पाखी पानी को छूकर उड़ गया।

17 सितंबर, 1898

तबीयत ठीक नहीं है। अवसाद व दुःख अब अकसर ही स्वामीजी के मन पर सवार होने लगा है। सुबह से ही उनके विचारों के आकाश पर घूम-फिरकर राजा अजित सिंह की यादों को लौटा लाता है। खेतड़ी का जिक्र...

राजस्थान का एक पथरीला राज्य—खेतड़ी। दोनों ओर रेत-ही-रेत, रेतों का ढेर। सुदूर अरावली पर्वत। टूटी-फूटी सड़कों पर कंकड़-पत्थरों से लदी ऊँट-गाड़ी! एकरस, उबाऊ रेत और ऊपर-नीची सड़कें। ...जयपुर से खेतड़ी जाने का यही एक रास्ता है।

वहाँ के राजा अजित सिंह। उन्होंने एक बंगाली संन्यासी स्वामी विवेकानंद से दीक्षा ली थी। अपने गुरु से उन्होंने पक्के तौर पर स्वामी विवेकानंद और लबादे के साज से लज्जित करके इसी राजा ने जहाज में फर्स्ट क्लास की टिकट खरीद दी थी।

प्रासाद परिसर में फूलों का बाग और एक ओर टेनिस कोर्ट पोलो ग्राउंड। तीसरी मंजिल की छत पर खड़े-खड़े स्वामीजी राजा को टेनिस खेलते हुए देखते रहते हैं। कभी-कभी उनका भी मन होता है कि हाथ में रैकेट लेकर वे भी कोर्ट में उतर पड़ें। लेकिन तबीयत साथ नहीं देती।

जोधपुर, जयपुर, जैसलमेर, बीकानेर, चित्तौड़...यहाँ अनगिनत दुर्ग हैं। खेतड़ी से 4 किलोमीटर दूर पर यहाँ के राजाओं का किला स्थित है—भोपालगढ़ किला। हाथियों के हमले रोकने के लिए बड़ी-बड़ी कीलों में जड़ा लोहे का फाटक, तोपखाना! अंदर विशाल दरबार! रानी महल। उस किले की छत पर किस्म-किस्म के रंगीन फ्रेस्को। चूरु, झुँझनू, बिसाड़—यहाँ की शेखावती पेंटिंग हैं।

यही सब सोचते-सोचते स्वामीजी मन-ही-मन हँस पड़े।

शिकागो में विवेकानंद की अपूर्व सफलता के बाद कलकत्ता में एक नागरिक सम्मेलन हुआ। कलकत्ता हाई कोर्ट के न्यायाधीश सर गुरुदास बंद्योपाध्याय से उस सम्मेलन का सभापति बनने का अनुरोध किया गया।

उन्होंने लोगों का अनुरोध साफ-साफ ठुकराते हुए सवाल किया, "कायस्थ का बेटा एकदम से संन्यासी कैसे हो गया?"

अंत में उत्तरपाड़ा के राजा प्यारे मोहन मुखोपाध्याय ने उस सम्मेलन का सभापतित्व किया। वैसे उन्होंने बीच की राह अपनाई थी। उस संन्यासी को उन्होंने 'स्वामी विवेकानंद' नहीं कहा। उन्होंने कहा, 'ब्रदर विवेकानंद'।

अपनी मातृभूमि कलकत्ता शहर के विद्वत् समाज में संन्यासी विवेकानंद के जात-कुल-गोत्र को लेकर जो संशय तैयार हुआ था, राजपूत राजा अजित सिंह के राज्य में वैसा नहीं हुआ।

'फतह विलास' प्रासाद से कुछ ही दूर पर एक विशाल पुष्करिणी थी—पन्ना शायर। पुष्करिणी के अंदर तक प्रशस्त सीढ़ियाँ उतर गई थीं। करीब ही राजस्थानी छतरी। एक तरफ हरा-भरा मैदान। पिछले वर्ष दिसंबर की 12 तारीख को इसी मैदान में स्वामीजी को अभ्यर्थना दी गई थी। विराट् जलसे का आयोजन किया गया था और काफी धूमधाम से भोज दिया गया था।

संन्यासी होने के बावजूद मदद माँगने में उन्हें बूँद भर भी संकोच नहीं होता था।

सेहत ठीक करने के लिए स्वामीजी इन दिनों कश्मीर में हैं। वहाँ के न्यायाधीश ऋषिवर मुखोपाध्याय के घर में वे मेहमान बनकर ठहरे हैं। उस मकान के एक निर्जन-एकांत कमरे में टूटे-फूटे मन से वे खेतड़ी के राजा को खत लिखने बैठे। उन्होंने लिखा—

"महामान्य महाराजा, यहाँ दो हफ्ते तक मैं बेहद बीमार पड़ गया था। अब मैं ठीक हो गया था, बिलकुल स्वस्थ! असल में मुझे कुछ रुपयों की जरूरत पड़ गई है। हालाँकि मेरे अमेरिकी मित्रों ने मेरी मदद के लिए अपनी औकात भर सबकु छ किया है; लेकिन हर समय, हर बार उनके सामने हाथ फैलाने में मुझे संकोच होता है, खासकर मेरी बीमारी की वजह से खर्च वगैरह बढ़ गया है। इस दुनिया में सिर्फ एक प्राणी ही ऐसा है, जिससे कुछ माँगने में मुझे कोई झिझक नहीं होती और वे हैं आप। आप कुछ दें या न दें, मेरे लिए दोनों बराबर है। अगर संभव हो तो कृपा करके रुपए भेज दें। आप कैसे हैं? अक्तूबर महीने के बीच मैं कश्मीर से चला जाऊँगा।"

12 अक्तूबर, 1898

विश्वामित्र ने वसिष्ठ के सौ पुत्रों की हत्या की थी। पुत्र-शोक से संतप्त, ऋषि वसिष्ठ और उनकी पत्नी अरुंधती पर्णकुटीर में दिन व्यतीत कर रहे थे। एक दिन शाम को वे अपने मुख्य प्रतिद्वंद्वी विश्वामित्र का एक अमूल्य ग्रंथ बड़े ध्यान से पढ़ रहे थे।

कुटीर में प्रवेश करके अरुंधती ने कहा, 'देव, आज चंद्र की कैसी उज्ज्वल शोभा है!'

ऋषि ने उस ओर बिना देखे ही उत्तर दिया, 'प्रिये, विश्वामित्र की प्रतिमा इसके मुकाबले दस हजार गुना अधिक उज्ज्वल है।'

वसिष्ठ सबकुछ भूल गए थे। सौ पुत्रों का निधन, अपना अपमान, क्लेश—सबकुछ विस्मृत हो गया था और वे अपने शत्रु की प्रतिभा की प्रशंसा में तन्मय थे।

स्वामीजी ने कहा, "हम लोगों का प्रेम भी उसी प्रकार का होना चाहिए, जैसा प्रेम वसिष्ठ का विश्वामित्र के प्रति था। उसमें व्यक्तिगत भला-बुरा लेशमात्र भी नहीं था।"

स्वामीजी अकेले ही क्षीर भवानी मंदिर के दर्शनों के लिए गए थे। उनका निर्देश था कि कोई उनके पीछे-पीछे न आए। कई दिनों बाद वे कुछ दर्शन करके लौट आए। वे अपने साथ हलदी रंग के गुच्छे भर फूल भी ले आए थे।

सबके माथे से उन फूलों का स्पर्श कराते हुए उन्होंने कहा, "यह माला मैंने देवी मैया को निवेदन की थी। अब हरि ॐ नहीं, अब माँ-माँ!"

बाद में जरूर सब लोगों को साथ लेकर क्षीरभवानी के मंदिर में गए थे।

पिछले दिन बुल व मारग्रेट को साथ लेकर स्वामीजी बारामूला आ पहुँचे।

नाश्ते की मेज के सामने बैठकर स्वामीजी आज जरा अन्यमनस्क हैं।

स्वामीजी ने कहा, "मेरा स्वदेश-प्रेम बह गया है। मेरे पास जो कुछ भी था, सब चला गया। अब केवल माँ, माँ!"

क्षीरभवानी मंदिर के दर्शनों के बाद से वे प्रायः ही मातृभाव में विभोर रहते हैं।

थोड़ा रुककर स्वामीजी ने फिर कहा, "मुझसे बहुत बड़ी गलती हो गई। देवी माँ ने मुझसे कहा, 'हालाँकि म्लेच्छ लोग मेरे मंदिर में घुसकर मेरी प्रतिमा अपवित्र करते हैं, लेकिन तुझे क्या फर्क पड़ता है! तू क्या मेरी रक्षा करता है? या मैं तेरी रक्षा करती हूँ?' ऐसा कहा उन्होंने।"

मातृभाव में विभोर होकर स्वामीजी ने अपनी बात जारी रखी, "अब मेरी कोई कामना नहीं है। अब मैं सिर्फ गंगा-तट पर मौनी, कोपीनधारी परिव्राजक का जीवन-यापन करना चाहता हूँ। अब मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं है। तुम लोगों का स्वामी सदा-सर्वदा के लिए मर गया। मैं जगत् को शिक्षा देनेवाला कौन होता हूँ? यह तो केवल प्रलाप और निरर्थक अहंकार है। जगन्माता को मेरी जरूरत नहीं है, मुझे ही जगन्माता की जरूरत है। ...निष्काम कर्म भी माया के अलावा और कुछ नहीं है। प्रेम ही एकमात्र पथ है।"

स्वामीजी की आँखों से भावावेग के आँसू झरते रहे। सभी भक्ति-विस्मित! इतना कुछ कहने के बाद भी स्वामीजी थमे नहीं, वे आवृत्ति करते रहे—

The stars are blotted out,

The clouds are covering clouds,

It is darkness vibrant, sonant.

In the roaring, whirling wind

Are the souls of a million lunatics

Just loose from the hrison-house,

Wrenching trees by the roots,

Sweeling all from the path.

The sea has joined the fray,

And swirls up mountain-waves

To reach the pitchy sky.

The flash of lurid light

Reveals on every side

A Thousand, thousand shades

Of Death begrimed and black—

Scattering palyes and sorrows,

Dancing mad with joy,

Come, Mother, come!

जरा थमकर स्वामीजी ने कहा, "सब वर्ण-वर्ण में सत्य समाया हुआ है। देवी माँ उपस्थित हैं! मैंने मृत्यु को देखा है।"

स्वामीजी की आवाज फिर गूँज उठी—

“For Terror is Thy name,

Death is in Thy breath,

And every shaking step

Destroys a world for e'er.

Thou 'Time' the All destroyer!

Come, O Mother, Come!

Who dares misery love,

And hug the borm of Death,

Dance in Destruction's Dance,

To him the Mother Comes.”

उसी समय फल बगीचा का एक बालक कमरे में पत्ते समेत नाशपाती का फूल मेज पर रखकर चला गया।

जो ने मेज से वह फूल उठा लिया।

वह फूल घुमा-फिराकर निरखते-निरखते उसने कहा, "स्वामीजी, पूजा के लिए ही फूलों की रचना हुई है, क्योंकि इनमें फल नहीं आएँगे।"

लेकिन उसकी बातों की ओर स्वामीजी का ध्यान नहीं था। वे अद्भुत स्थिर दृष्टि से बस देखते रहे। ऐसा लगा मानो वे किसी अन्य भाव-जगत् से विराज रहे हों।

जो से भी वे फूल स्वामीजी बारहमूला छोड़कर लाहौर जाने वाले हैं।

दोपहर ढल चुकी है, शाम उतर आई है।

स्वामीजी गंभीर। कुछ ही देर में वे यहाँ से विदा लेने वाले हैं। मुसलमान सरदार माँझी की चार वर्षीया नन्हीं बेटी सिर पर लादे हुए एक बार कोश ताजे फल ले आई थी। स्वामीजी ने उस शिशु-कन्या की उमा के रूप में नीले फूल अर्पित करके कभी उसकी पूजा की थी।

यह बच्ची अपने नन्हे-नन्हे पाँवों से चलती हुइ स्वामीजी के ताँगे की तरफ बढ़ आई। उसने फलों का बारकोश ताँगे पर रख दिया।

ताँगा आगे बढ़ने लगा। वह बच्ची भी ताँगे के साथ-साथ चलती रही। स्वामीजी ताँगे के अंदर बैठे हुए। ताँगे की गति के साथ उनकी देह भी हिलती-डुलती रही। वह बच्ची एकाएक

ठिठक गई। वह आते हुए ताँगे की तरफ एकटक देखती रही।

अक्तूबर 1898, दुर्गाष्टमी

स्वामीजी बाग बाजार माँ के घर आ पहुँचे। उनके साथ हैं स्वामी ब्रह्मानंद, प्रकाशानंद! बिमलानंद महाराज भी आए हैं।

कई दिनों पहले ही स्वामीजी कश्मीर से बेलूर लौटे हैं।

राखी-पूर्णिमा के दिन स्वामीजी अमरनाथ के दर्शनों के लिए गए थे। तुषारलिंग उन्हें साक्षात् शिव जैसा लगा। दर्शन के बाद उन्होंने अपनी अनुभूति व्यक्त की। उन्होंने कहा कि शिवलोक के समस्त द्वार मानो उनकी आँखों के सामने खुल गए हों।

अमरनाथ में कोई पंडा नहीं है। भगवान् को लेकर कोई व्यवसाय नहीं होता। वहाँ हर ओर पूजा-भाव विराजमान रहता है। अन्य किसी तीर्थस्थल में स्वामीजी ने इतना आनंद महसूस नहीं किया था।

स्वामीजी ने निवेदिता को बताया कि उन्हें अमरनाथ से इच्छा मृत्यु का वरदान प्राप्त हुआ है।

लाहौर से कराची हरिपद मित्र के घर जाना तय होने के बावजूद चूँकि स्वास्थ्य और मन साथ नहीं दे रहा था, इसलिए वे वापस लौट आए। खत लिखकर उन्होंने हरिपद बाबू को जानकारी दे दी कि कश्मीर में उनकी सेहत बिलकुल ही टूट गई है और पिछले नौ वर्षों से उन्होंने दुर्गा-पूजा नहीं देखी, इसलिए वे कलकत्ता वापस लौट रहे हैं।

कमरे में दाखिल होकर स्वामीजी ने माँ ठकुराइन को साष्टांग प्रणाम किया। स्वामीजी के माथे पर हाथ रखकर माँ ने उन्हें आशीर्वाद दिया।

माँ का स्पर्श पाकर स्वामीजी ने अभिमान के लहजे में कहा, "माँ, ऐसे तो हैं तुम्हारे ठाकुर! कश्मीर में एक फकीर का चेला मेरे पास आने-जाने लगा, इसलिए उसने अभिशाप दे डाला कि तीन दिनों के अंदर अपने पेट की बीमारी समेत मुझे यह जगह छोड़कर विदा लेनी होगी और हुआ भी यही। तुम्हारे ठाकुर कुछ भी नहीं कर पाए।"

माँ ने कहा, "विद्या! विद्या को तो मानना ही पड़ता है। बच्चे, वे लोग यहाँ तोड़ने नहीं आते। हमारे ठाकुर तो छींक, छिपकिली तक को मानते थे। सुना है, शंकराचार्य तक ने अपने शरीर में व्याधि ग्रहण की थी। तुम तो जानते हो, अपने चचेरे बड़े भाई के श्राप से ठाकु र के मुँह से खून आने लगा था। तुम्हारी देह को रोग लगाना और ठाकुर को रोग लगाना एक ही बात है।"

स्वामीजी का अभिमान अभी तक गया नहीं। वे माँ की बात मानने को राजी ही नहीं हैं।

माँ ने हँसकर कहा, "माने बिना और कोई उपाय भी क्या है, बच्चे? तुम्हारी चुटिया तो उनसे बँधी हुई है जी!"

माँ की बातों के लिए स्वामीजी के पास कहने को कुछ भी नहीं रहा। उनकी आँखों से आँसू बहने लगे। स्वामीजी ने माँ को प्रणाम किया।

13 नवंबर, 1898

निवेदिता अधीर आग्रह से प्रतीक्षारत हैं। आ गए। बस, आ ही गए। कहीं खट् की आवाज होते ही निवेदिता देखने दौड़ पड़ती हैं। उन्होंने देखा कि एक बच्ची दरवाजे की दरार में झाँककर एकबारगी भाग खड़ी हुई।

आज रविवार है, काली-पूजा! 16 नवंबर बोसपाड़ा लेन में स्थित किराए के मकान में ठाकुर श्रीरामकृष्ण के नाम एक विद्यालय खुलने वाला है। नए स्कूल का नाम होगा—रामकृष्ण स्कूल फॉर गर्ल्स। विद्यालय की प्राण-प्रतिष्ठा के लिए बस आने ही वाली हैं।

स्वामीजी इन दिनों बेरीनाग में हैं। अँधेरी रात, चारों तरफ घना जंगल! स्वामीजी लोगों ने पहाड़ के ढलान पर एक और तंबू गाड़ दिया है। उसी तंबू के सामने जलती हुई अलाव को चारों तरफ से घेरकर बैठे हुए थे।

अचानक निवेदिता से मुखातिब होकर स्वामीजी ने पूछा, "क्या बात है, आजकल तुम अपने स्कूल के बारे में कोई जिक्र नहीं करतीं? तुम क्या बीच-बीच में अपने स्कूल को भूल जाती हो?"

निवेदिता अचकचा गईं। इससे पहले स्वामीजी के सामने कई बार स्कूल के निर्माण का जिक्र छेड़ा भी, मगर स्वामीजी हमेशा खामोश रहे।

वैसे निवेदिता को इसकी जानकारी नहीं थी कि कई दिनों पहले ही स्वामीजी ने स्वामी ब्रह्मानंद को खत लिखा था—"चाहे जैसे भी हो, कलकत्ता में निवेदिता का बालिका विद्यालय खड़ा करना ही होगा।"

बहरहाल, स्वामीजी की आवाज सुनकर निवेदिता दौड़कर अपने कमरे से बाहर निकल आईं। उन्होंने देखा, माँ आई हैं। साथ में गुलाब माँ और योगीन माँ! पीछे-पीछे स्वामीजी, स्वामी ब्रह्मानंद और स्वामी शारदानंद!

स्वामीजी का चेहरा आज खुशी से चमक रहा था। कमरे में कदम रखते ही स्वामीजी ने निवेदिता से पूछा, "क्यों भई, विद्यालय के बारे में क्या सोचा है तुमने?"

निवेदिता ने जवाब दिया, "अभी तो मुझे किसी मददगार की जरूरत नहीं है। सारा काम अभी मामूली तरीके से ही शुरू होगा, और बच्चे जैसे अक्षर-अक्षर जोड़कर पढ़ना सीखते हैं, मैं भी उसी तरह धीरे-धीरे अपने कार्यों की व्यवस्था तय कर लूँगी। इसके अलावा, मेरी इच्छा है कि इस शिक्षा में एक निर्धारित धर्म-भाव भी मौजूद रहेगा। मुझे लगता है कि सांप्रदायिक भाव विशेष उपयोगी होगा।"

स्वामीजी काफी मन लगाकर निवेदिता की बातें सुनते रहे। निवेदिता ने कमरे की दीवार पर ठाकुर श्रीरामकृष्ण का एक बड़ा सा पट झुला रखा था। उसके नीचे दुनिया के एक मानचित्र की पूजा को प्राधान्य देने का संकल्प लिया था।

ठाकुर की तसवीर की ओर देखते हुए स्वामीजी ने पूछा, "उत्साह कायम रखने के लिए कि क्या तुम सांप्रदायिक भाव शामिल करना चाहती हो?"

निवेदिता की परिचिता कोई ब्राह्म महिला उनके स्कूल में काम करना चाहती थीं। स्वामीजी ने यह प्रस्ताव खारिज कर दिया। उन्हें आशंका थी कि परवर्ती समय में संघर्ष अवश्यंभावी है। उनकी इच्छा है, निवेदिता हिंदू समाज में शामिल होकर आत्मयोग करे।

पिछले दिन माँ बेलूर मठ गई थीं। वहाँ अपने हाथों में उन्होंने ठाकुर श्रीरामकृष्ण की पट-पूजा की थी। शाम को ही वे बाग बाजार वापस लौट आई थीं। आजकल के 10/2, बोसयाड़ा लेनवाले मकान में रहती हैं। स्वामीजी कल ही माँ के साथ कलकत्ता चले आए थे। स्वामी ब्रह्मानंद और स्वामी शारदानंद भी उनके साथ लौट आए थे।

पिछले दिन बलराम बसु के दुमंजिले घर के हॉल-घर में नए स्कूल के उपलक्ष्य में एक सभा का आयोजन किया गया है। वहाँ मास्टर साहब, सुरेश दत्त, हरमोहन दत्त वगैरह बहुतेरे प्रमुख लोग मौजूद थे। निवेदिता ने सभी लोगों को अपने-अपने घरों की बेटियों को इस स्कूल में भेजने का अनुरोध किया। उस समय स्वामीजी जाने कब तो आकर दर्शकों की पिछली पंक्ति में बैठ गए, निवेदिता ने खयाल ही नहीं किया।

स्वामीजी ने हँसते-हँसते कई लोगों को कुहनियाकर कहा, "उठ, उठ! चल, उठ जा। बेटी का सिर्फ बाप होने से नहीं चलेगा। चल, उठकर बोल तो सही, आवेदन का प्रत्युत्तर तो दे! कहो, "हाँ, हम सब राजी हैं। हम सब अपनी-अपनी बेटी तुम्हें देने को राजी हैं। हम अपनी बेटी तुम्हें देने को राजी हैं। हम देंगे अपनी बेटी!"

कोई कुछ बोलने की हिम्मत कर पा रहा था। स्वामीजी ने हरमोहन से जिद करते हुए कहा, "तुझे देती ही होगी रे।"

स्वामीजी ने उठकर खड़े होते हुए कहा, “Well, Miss Noble, this gentleman offers his girl to you.”

"ये साहब अपनी बेटी आपको देते हैं।"

यह सुनते ही निवेदिता खुशी से नाच उठीं।

"फिलहाल पाँच लड़कियों को लेकर कल से स्कूल शुरू हो जाएगा।"

निवेदिता ने पहले से ही पूजा के फूल सहेजकर रख छोड़े थे।

माँ बेहद धीरे-धीरे बोलती थीं। वे धीर-गंभीर, शांतमयी महिला थीं यह उनका सहज स्वभाव था।

ठाकुर के चरणों पर फूल अर्पित करके माँ ने उन्हें प्रणाम करके कहा, "मेरी प्रार्थना है कि इस विद्यालय पर जगन्माता के आशीर्वाद की वर्षा होती रहे और यहाँ से शिक्षा प्राप्त लड़कियाँ आदर्श बनें।"

माँ की बगल में खड़ी गुलाब माँ माँ के मुखारविंद से भरते आशीर्वचन को स्पष्ट भाव से दोहराती रहीं। मंत्रमुग्ध निवेदिता की आँखें खुशी से छलछला उठीं।

1 दिसंबर, 1898

मन कमजोर पड़ता जा रहा है, हताशा घिरती आ रही है। विदेश से वापस लौट आने के बाद से ही स्वामीजी की सेहत काफी तेजी से टूटती जा रही है। उनके तन-बदन में विविध रोगों ने घोंसला बना लिया है। सेहत की टूटन कभी-कभी मन पर भी अपना असर डालने लगी है। इन दिनों वे बेलूर में रह रहे हैं।

स्वामीजी को अहसास हो गया है कि अब वे ज्यादा दिन नहीं जीनेवाले। ज्यादा दिन वे नहीं बचेंगे। इन दिनों अकसर ही उन्हें अपनी गर्भधारिणी माँ की याद आने लगती है। माँ का खयाल आते ही उनके मन को बेतरह चिंता-फिक्र घेर लेती है। उनके दोनों भाई अभी भी कमाई-धमाई में सक्षम नहीं हुए। उनके घर में आय के नाम पर कुछ भी नहीं है। ऊपर से पारिवारिक मामले-मुकदमे। बीच-बीच में वे खुद ही अपने को दोष देने लगते हैं। स्वामीजी को लगता था कि उन्होंने अपनी माँ को बेतरह कष्ट दिया है। वे जो अपना घर छोड़कर चले आए, ऐसा करके उन्होंने अपने पूरे परिवार को सर्वनाश की ओर धकेल दिया। अपने कुचक्री रिश्तेदारों का खयाल आते ही उनका मन भयंकर खौफ से भर जाता है। उनके मन में सवाल उठने लगता है कि लोभ-लालसा की अँधेरी गुफा में उनका परिवार अपना घर-बार गँवाकर कहीं अतल में डूब तो नहीं जाएगा? स्वामीजी को लगता था कि पिता के देहांत के बाद घर के बड़े बेटे के रूप में वे अपने किसी दायित्व, किसी कर्तव्य का पालन करने में अक्षम रहे। उनके अपराधों का कहीं कोई अंत नहीं है। उनके मन में पाप-बोध जाग उठा है और तब वे अपने को सही नहीं रख पाते।

ऐसे पलों में उन्हें किसी और राज्य में बसे अपने किसी मित्र की याद आने लगती है। उन्होंने अपने उसी मित्र को पत्र लिखा। उस पत्र में उन्होंने अपनी दुर्भावना के बारे में अपना दिल उलेड़कर लिखा—

"माननीय महराज, आज मैं महाराज के सामने मैं अपनी किसी परम जरूरत के बारे में बखान पेश कर रहा हूँ। आपको मैं अपनी जिंदगी का एक मित्र समझता हूँ और आपके सामने अपना मन खोलकर बताने में तिल मात्र भी झिझक नहीं है मुझे। अगर आपकी नजर में मेरे इन वक्तव्यों की कोई कीमत, कोई महत्त्व हो तो भला, वरना दिन-सुलभ क्षमा द्वारा मेरी मूर्खता को आप भूल जाएँ।

"आप जानते हैं कि विदेश से लौटने के बाद से ही मैं लगातार बीमारी भोग रहा हूँ। कलकत्ता में रहते हुए महाराज ने मुझे अपने महान् बंधुत्व और व्यक्तिगत भाव से मदद का आश्वासन दिया था और कहा था कि मैं अपनी बीमारी से परेशान न होऊँ । लेकिन, मेरी यह बीमारी अब ठीक होने वाली नहीं है। अत्यधिक स्नायविक उत्तेजना की वजह से यह रोग हुआ है और मैं चाहे हजारों बार हवा-पानी बदल आऊँ, लेकिन जब तक उत्तेजना, दुश्चिंता वगैरह दूर न हो, तब तक कोई सुफल नहीं होगा।

"ये दो वर्ष विभिन्न जल-हवा परीक्षण में कट गया, लेकिन मेरी सेहत दिनोदिन गिरती ही जा रही है। अब मैं प्रायः मृत्यु के द्वार पर हूँ। आज मैं महाराजा के आश्वासन, महानुभवता और बंधुत्व के समक्ष एक आवेदन करना चाहता हूँ।

"जानते हैं, हर वक्त एक पाप-बोध मेरे मन को क्षत-विक्षत करता रहता है। मैं पार्थिव जगत् में थोड़ा-बहुत सेवा करके चले जाना चाहता हूँ। मैंने अपनी माँ के प्रति शोचनीय उपेक्षा दिखाता रहा। इसके अलावा, मेरा छोटा भाई महिमा विदेश में है। मेरी माँ दुःख से विपर्यस्त है। मेरी अंतिम इच्छा यही है कि कम-से-कम कुछ वर्ष माँ की सेवा करके अपने पाप कम करूँ। मैं माँ के साथ रहना चाहता हूँ। अपने छोटे भाई की शादी भी करना चाहता हूँ, ताकि हमारी वंशधारा थम न जाए। इसके फल-स्वरूप मेरी माँ और मेरे आखिरी दिन सहज हो उठेंगे। मेरी माँ इन दिनों एक टूटे-फूटे घर में रहती हैं, जो वाकई रहने लायक बिलकुल नहीं है। मैं उनके लिए एक छोटा सा, सुंदर सा घर बनवाना चाहता हूँ। छोटे भाई की उपार्जन-क्षमता के बारे में मुझे कम उम्मीद है। उसके लिए भी कुछ कर जाने की जरूरत है।

"आप राजा रामचंद्र के वंशधर हैं। आप जिसे प्यार करते हैं, जिसे अपना मित्र मानते हैं, उसके लिए यह मदद करना क्या आपके लिए बेहद कष्टकर होगा? मैं नहीं जानता कि और किसके आगे मैं अपना यह आवेदन पेश करूँ।

"मुझे यूरोप से जो कुछ मिला था। उसकी कौड़ी-कौड़ी मैं अपने आरंभिक 'कर्म' में निवेश कर दिया है। मैं अपने लिए अन्य किसी से भी आगे हाथ नहीं फैला सकता। मैंने अपने परिवार की छोटी-से-छोटी बातें आपके सामने खोलकर रख दी हैं और दुनिया के किसी भी दूसरे व्यक्ति को इसकी जानकारी नहीं होगी। मैं अब क्लांत, हताश मृत्युपथ यात्री हूँ। मेरी प्रार्थना है—मेरी यह अंतिम इच्छा आप पूरी कर दें। मेरे प्रति आपने बहुत बार दया दिखाई है, बहुत बार वृहदत्तर उदारता का परिचय दिया है। अस्तु, यह सहृदय कार्य आपके महान् और उदार मन के योग्य होगा। मेरी जिंदगी के आखिरी दिन सहज और खूबसूरत ढंग से व्यतीत होगा। जिस ईश्वर की सेवा में मैंने अपना जीवन उत्सर्ग करने की कोशिश की है, वह महान् ईश्वर सदा-सर्वदा आपके और आपके आत्मीयवर्ग के सिर पर अपना श्रेष्ठ आशीर्वाद-वर्षण करें।"